श्रीमज्जानकीरसिकोविजयतेतराम् ।
श्रीमतेरामानन्दायनमः ।

सकलशास्त्रपारावारपारगधुरीणैः श्रीरामो-
पासनापथप्रदर्शकाचार्य्य वर्य्यैः
श्रीरामचरणाह्व करुणासिन्धु
स्वामिभिः संग्रहीतः ।

श्रीराम नवरत्न सार संग्रहः ।

निखिल शास्त्र निष्णात विद्वद्वर पं०
श्रीरामबल्लभाशरण कृतया रत्नप्रभा-
ख्यया भाषा टीकया सहितः ।

श्रीजानकीघट्टवास्तव्यैः श्रीरामानन्योपासकैः
श्रीअवधशरणैः प्रकाशितः ।

श्रीसद्गुरुसदन निवास परैः श्रीपुरुषोत्तम-
शरणैः संलिखितः ।

अयोध्यायाम् ।
गोकुलप्रसादेन गोकुल प्रेसाख्य यंत्रालये मुद्रितः ।

प्रथमावृत्तिः १००० परमिता | सं० १९८५ | मूल्य ॥।)

✻ श्रीमज्जानकीशोविजयतेराम् ✻

भूमिका।

प्रेम घनैक जीवन सज्जनों को यह अविदित नहीं है कि श्रीमानस राम चरित के प्रथम तिलक रचयिता श्रीजानकी घाट चारुशीला बाग़ निवासी श्रीयुत् १०८ श्रीरामचरणजी महाराज जैसे अनुभविक शास्त्रज्ञ तथा श्रीरामोपासना में अग्रेसर माने जाते हैं दृढ़ भजन सीम सर्व मान्य लोकोद्धरण क्षम कई प्रतिष्ठित महानुभाव आपही के उपदेश परिचायिक प्रसिद्ध हुए हैं। आपकी प्रसिद्धी श्रीकरुणासिन्धुजी इस नाम से चली आती है। यह तो निर्विवाद सिद्धान्त है कि ईश्वर तत्व में किसी तरह का भेद नहीं है परंच ऋषियों ने जहाँ तहाँ जो भेद प्रदर्शन कुछ लिखा है वह केवल तत्तदुपासना में दृढ़ होने का दृष्टि से ही कहा जा सकता है। यही बीज एक मात्र उपासकों के ग्रन्थ रचनावों में कारण है। यह श्रीकरुणासिन्धुजी के भाषा ग्रन्थों में स्पष्ट रूप से निर्णीत है। आपके बनाये क़रीब १५ ग्रन्थ उपलब्ध हो रहे हैं। सुना गया है कि आपने इस श्रीराम-नवरत्न सार संग्रह नामक ग्रन्थ को प्रेमियों के प्रेरणा से सं० १८८२ में संग्रहीत किया है। उक्त स्थान के वर्तमान महान्त वर श्रीलक्ष्मणशरणजी के गुरु वन्धु श्रीअवधशरणजी ने इसके भाषानुवाद के लिये कई वार अनुरोध किया पर समया भाव से उसकी उपेक्षा ही होती आई। सुन्दरमणि सन्दर्भ के अनुवाद होते समय इनका विशेष आग्रह हुआ अतः श्रीसरयू तट सद्गुरु सदन पापमोचन घाट श्रीसिया मोहिनीनिकुञ्ज निवासी उत्साही संत श्रीपुरुषोत्तमशरणजी ने इसके लिखने का भार भी सहर्ष ले लिया और आज परम प्रभु श्रीसीतारामजी को कृपा से यह पूर्ण हो गया॥

निवेदकः—

पं० रामवल्लभाशरण,

श्रीजानकीघाट, श्रीअयोध्याजी।

मि० आषाढ़ कृष्ण १० बुधवार सं० १९८५ वै०।

श्रीगुरु परम्परा ।

सीतानाथ समारम्भां रामानन्दार्य मध्यमाम् ।
अस्मदाचार्य पर्य्यन्तां वंदे गुरुपरम्पराम् ॥१॥

(१) श्रीरामजी
(२) श्रीसीताजी
(३) श्रीहनुमानजी
(४) श्रीब्रह्मदेवजी
(५) श्रीवसिष्ठजी
(६) श्रीपराशरजी
(७) श्रीव्यासजी
(८) श्रीशुकदेवजी
(९) श्रीपुरुषोत्तमाचार्य
(१०) श्रीगंगाधराचार्य
(११) श्रीसदाचार्य
(१२) श्रीरामेश्वराचार्य
(१३) श्रीद्वारानंदाचार्य
(१४) श्रीदेवानन्दाचार्य
(१५) श्रीश्यामानन्दाचार्य
(१६) श्रीश्रुतानंदाचार्य
(१७) श्रीचिदानंदाचार्य
(१८) श्रीपूर्णानन्दाचार्य
(१९) श्रियानन्दाचार्य
(२०) श्रीहर्यानन्दाचार्य
(२१) श्रीराघवानन्दाचार्य
(२२) श्रीजगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्य
(२३) श्रीअनंतानंदाचार्य
(२४) श्रीकृष्णाचार्य
(२५) श्रीअग्र स्वामीजी
(२६) श्रीरामभगवानजी
(२७) श्रीलक्ष्मणदासजी
(२८) श्रीमस्तरामजी
(२९) श्रीलक्ष्मीरामजी
(३०) श्रीनन्दलालजी
(३१) श्रीचरणदासजी
(३२) श्रीहरीदासजी
(३३) श्रीरामप्रसादजी दीनबन्धु
(३४) श्रीरघुनाथप्रसादजी
(३५) श्रीरामचरणजी करुणासिन्धु
(३६) श्रीसीताराम सेवकजी
(३७) श्रीजानकीवरशरणजी
(३८) श्रीलक्ष्मणशरणजी

श्रीजानकीरसिकोबिजयते।

श्रीमते रामानन्दायनमः ।

श्रीराम-नवरत्न प्रारम्भः।

मत्स्यः कूर्मो बराहो नरहरिरतुलो वामनो याम-दग्निः सभ्राता कंस शत्रुः करुणमयवपुर्म्लेक्ष विध्वं-सनश्च एतेचान्येपि सर्वेतरणि कुलभुवोयस्य जाताः कलांशैः तं व्याप्तं ब्रह्मतेजो विमलसुखमयं रामचन्द्रं नमामि ॥ १ ॥

मत्स्य, कूर्म, बाराह अतुल तेजमय श्रीनृसिंह तथा वामन, याम-दग्नि श्रीपरशुराम भ्राता बलदेव जी के सहित कंश के शत्रु श्रीकृष्ण भगवान, करुणामय वपु बौद्ध, म्लेक्ष विध्वंसक श्रीकल्कि ये दश अव-तार और अन्य भी जो अवतार में परिगणित हैं पृथु ऋषभादि ये सब सूर्य्य कुलमें उत्पन्न जिस पर पुरुष के अन्शकला से उत्पन्न होते हैं उस व्याप्त ब्रह्म तेज रूप बिमल सुखमय श्रीरामचन्द्र महाराज को मैं नमस्कार करता हूँ।

सर्वेलोकाः स शोभा तदुपरि सुखमामूल रूपा-त्वयोध्या तस्यां रामस्ससीतः विहरतिसततं भृत्य-संवेष्टितश्च अद्वैताखंडरूपो विमलगुणमयो ब्रह्म-हर्ष प्रयुक्तोयंध्यायन्त्यवानित्यं बिधि हरि गिरिशा-श्चापि सर्वे तथान्ये ॥ २ ॥

सर्वांशी, सर्वावतारी श्रीरामजी जहाँ पर स्वेच्छित अनंत लीला विस्तार करते हैं वह आपका धाम परात्पर है तिसको वर्णन करते हैं।

सर्वेति । अपनी अपनी शोभावों के सहित सब लोकों से पर सुखमा का मूल रूप श्रीअयोध्याजी हैं तिस श्रीअयोध्याजी में अनंत भृत्यवर्गों से वेष्टित, अद्वैत, अखंड रूप करुणा, कृपा, वात्सल्य सौशील्य सौलभ्यादि अनंत कल्याण गुणों से युक्त तथा बिधि, हरि, शिवादिक अन्य समस्त देवादि गण जिनका नित्य ध्यान करते हैं ऐसे साकेताधिपति श्रीरामजी श्रीवैदेही जू के सहित नित्य बिहार करते हैं ॥ २ ॥

नित्यं नौमि गुरुं गणेश्वरमजं देवीं तथा भारतीं
शेषं चैव तथा शिवं कपिवरं व्यासं च कुंभोद्भवं
बाल्मीकिं च सुरर्षिमेव स शुकंतीर्थं सरय्वादिकं
साकेतादि पुराणिरामचरणः स्वान्तः पुरानन्ददं ॥३॥

अब ग्रंथकार महाराज श्रीकरुणासिन्धुजी अपने नामको स्पष्ट करते हुए अभीष्ट देवों का बन्दन करते हैं। परतत्व प्रदर्शक श्रीगुरू महाराज नामके प्रभाव ज्ञाता श्रीगणेश्वरजी, जगत रचयिता श्रीब्रह्माजी बुद्धि बर्द्धिका श्रीभारती देवी भगवद्गुण रसिक श्रीशेषजी, श्रीरामतत्व के यथार्थ ज्ञाता, वक्ता श्रीशिवजी, श्रीरामजी के अनन्योपासक कपिवर श्रीहनुमानजी, सर्बलोकोपकारक श्रीव्यासजी श्रीरामोपासना पथ-प्रदर्शक कुंभोद्भव श्रीअगस्त्यजी श्रीरामचरित के प्रादुर्भाव स्थान महर्षि श्रीबाल्मीकिजी व्यास, बाल्मीक्यादि के उपदेष्टा सुर ऋषि श्रीनारदजी परमहंस राज श्रीशुकदेवजी गंगादि सर्ब तीर्थों की आदि भूता श्रीसरयू तथा त्रिपाद विभूतिगत श्रीसाकेतादिपुर नित्य रसमय बिहार लीलास्पद आनन्द दाता अन्तःपुर इन सबों को रामचरण नामक मैं नित्य नमस्कार करता हूँ॥ ३ ॥

श्रीरामायण वेद शास्त्र गदितं तत्वं परं नाटके
यत्तन्त्रस्मृति संहितासु मुनिभिः सारं पुराणेष्वपि
श्रीरामस्य रसं बिरंचि हनुमत् व्यासादिभिः शंभुना
नाम्नागुंफति भक्त रामचरणाख्यो मालिकां
तन्मयीं ॥ ४ ॥

अब ग्रंथकर्ता प्रतिपाद्यतत्व को प्रमाण भूत निदर्शन करते हुये ग्रन्थ की प्रतिज्ञा करते हैं।

जो तत्वश्रीमद्रामायण, वेद, शास्त्र, में कथित हैं तथा जो परतत्व वाटक, तत्तत्स्मृति संहितावों में मुनियों से बर्णित है जो सब पुराणों में सार है जो श्रीरामजी का रसरूप दिव्य तत्व ब्रह्मा श्रीहनुमानजी व्यासादि मुनिवर और शंभु श्रीमहादेवजी आदिकों से निर्णीत है। उसीको तन्मयीमाला श्रीसीताराम भक्त रामचरण नामक कवि गुम्फन करते हैं अर्थात् यह नवरत्नमयी माला बनाते हैं तात्पर्य्य यह है कि जैसे रत्न पर्वतादिकों में सार रूप होते हैं तैसे ही वेद, शास्त्र, संहिता पर्वत रूप हैं उन सबों में श्रीरामतत्व सर्वोपरि बर्णित है वही रत्न रूप है उन रत्नों को एकत्र करना माला बनाना है। जैसे कि रत्नकी माला धारण करने वाला दरिद्रादि दुःखों से रहित होकर परमऐश्वर्य्यवान जगत में प्रतिष्ठित माना जाता है तैसे ही श्रीसीताराम स्नेह नवरत्नमयी माला को जो धारण करेंगे वे माया जनित संसार दुःखों से रहित होकर परमानन्द रूप श्रीसीतारामजी के प्राप्ति के अधिकारी होकर जगत पूज्य होंगे ॥ ४ ॥

अब श्रीरामजी के नाम, रूप, धाम, अस्त्रादिकों को सबसे पर हैं यह बर्णन करते हैं।

भवाब्धि संतारकं रामनाम श्रीरामरूपंपरतः परंच श्रीरामधामं प्रकृतेः परं तथा सर्बान् परान् विद्धितदस्त्र संघान ॥ ५ ॥

श्रीराम नाम संसार समुद्र का तारक है श्रीरामरूप परसे पर है श्रीराम धामही प्रकृति मंडल से पर है तथा श्रीरामजी के अस्त्र समूहों को सबसे पर जानो ॥ ५ ॥

अनेक शास्त्रं बहु वेदितव्यंस्वल्पश्च कालो बहु विघ्नयुक्तः यत्सार भूतं तदुपासनीयं हंसोयथा क्षीरमिवांबु मिश्रं ॥ ६ ॥

शास्त्र अनेक हैं जानने योग्य बहुत है बहु विघ्न युक्त काल थोड़ा है इस हेतु जो सारभूत है उसीकी उपासना करनी चाहिये। जैसे

जलमें मिले हुए दूधको हंस ग्रहण कर लेता है उसी प्रकार से शास्त्रों की अनेक बातें जल समान हैं उनमें मिले हुए कल्याणकारक परमात्म-तत्व को ग्रहण कर लेना चाहिए ॥ ६ ॥

तत्र प्रमाण माह सारस्वते । सामान्य शास्त्रतो नूनं विशेषो बलवान भवेत् । परेण पूर्व वाधोवा प्रायशो दृश्यतामिह ॥ बहु व्यापकश्च सामान्यं अल्प व्यापको विशेषः ॥ ७ ॥

सामान्य शास्त्र से विशेष शास्त्र बलवान होता है अथवा परसे पूर्वका बाध होता है यह प्रायः करके शास्त्रों में देखा जाता है । बहु व्यापक जो वाक्य हो वह सामान्य कहा जाता है अल्प व्यापक को विशेष कहते हैं क्योंकि बहु व्यापक सावकाश है अल्प व्यापक निरवकाश है निरवकाश ही बाधक होता है ॥ ७ ॥

श्रीहनुमन्नाटके ।

इदं शरीरं शत संधि जर्जरं पतत्यवश्यं परिणाम दुर्वहम् । किमौषधं पृच्छसि मूढ़ दुर्मते निरामयं राम रसायनं पिब ॥ ८ ॥

यह शरीर सैकड़ों सन्धि वाला है अर्थात् बहुत से जोड़ इसमें हैं जो कई जोड़ वाला वस्तु होता है वह कच्चा होता है तिसपर भी रोगों से जर्जर है यह अवश्य गिरेगा परिणाम में दुर्वह है हे मूढ़ ऐसे शरीर के लिये क्या औषध को पूछता है अरे मूढ़ सर्व रोगों से रहित सर्व रोगों का नाशकारक श्रीराम नाम रूप रसायन को पान कर जिसमें जन्म मरण से तथा संसार के रोगों से रहित हो जायगा ॥ ८ ॥

मुक्ति स्त्री कर्णपूरो मुनि हृदय वयः पक्षतीतीर-भूमी संसारा पारसिन्धोः कलिकलुषतमस्तोमसो-

मार्कबिंबौ उन्मीलत्पुण्य पुंजद्रुम ललित दले लोचने च श्रुतीनां कामं रामेति बर्णौ शमिह कलयतां संततं सज्जनानां ॥ ६ ॥

मुक्ति रूपा स्त्रीके कर्णपूर अर्थात् ताटंक तात्पर्य्य यह कि जैसे बिना ताटंक के स्त्री बिधवा मानी जाती है इसी तरह जिस मुक्ति में श्रीराम नाम न हो वह बिधवावत् पति हीना अनाथा अशोभित है तथा मुनियों के हृदय रूपी पक्षियों के ये दोनों बर्ण पक्ष रूप हैं जैसे पक्ष की सहाय से पक्षी अपने अभीष्ट स्थान को प्राप्त होता है उसी तरह राम नामके सहायता से मुनियों के हृदय पर ब्रह्मतत्व को प्राप्त करने में समर्थ होते हैं और अपार संसार समुद्र के ये दोनों बर्ण तीर की भूमि हैं अर्थात् किनारा हैं जिसने इन दोनों बर्ण का अवलम्ब लिया वह इस किनारे से उस पार अर्थात् प्रकृत मंडल भेद कर त्रिपाद बिभूतिगत श्रीरामजी के धामको प्राप्त होता है कलियुग का पाप समूह तमका समूह है उसके बिनाश करने के लिये ये दोनों बर्ण चन्द्रमा तथा सूर्य्य के बिंब हैं उदय होते पुण्य पुञ्ज रूपी मनोहर वृक्षके ये दोनों बर्ण सोहावन दल हैं और श्रुतियों के तो दोनों लोचन हैं जैसे नेत्र से पुरुष सब कुछ देखता है वैसेही श्रुति समुदाय इन दोनों बर्ण के द्वारा ही समस्त तत्व तथा परब्रह्म बोधको देने वाले हैं। तात्पर्य्य यह कि वेदों का मुख्य तात्पर्य्य श्रीराम नामही है इस प्रकार के श्रीराम ये जो दोनों बर्ण रकार मकार हैं वे सज्जनों के इस संसार में निरंतर यथेष्ट कल्याण के देने वाले होवैं ॥ ९ ॥

कल्याणानां निधानं कलिमलमथनं पावनं पावनानां पाथेयं यन्मुमुक्षोः सपदि परपद प्राप्तयेप्रास्थितस्य बिश्रामस्थानमेकं कबिवर बचसां जीवनं सज्जनानां वीजं धर्म द्रुमस्यप्रभवतु भवतां भूतयेरामनाम ॥ १० ॥

समस्त कल्याणों का निधान कलिमलका मथन करने वाला ब्रह्मचर्य, यज्ञ, तप, तीर्थ, ब्रत, नियम, योगादिक जो पावन साधन

हैं उनका भी पवित्र करने वाला अर्थात् बिना राम नामके सब साधन
अपवित्र माने गये हैं शीघ्र ही परम पद की प्राप्ति के लिये मुमुक्षुवों
को पाथेय अर्थात् मार्ग का खर्च है जैसे खर्च की सहायता से पुरुष
अपने प्राप्तव्य स्थान को जा सकता है इसी प्रकार से संसार से मुक्त
होने की इच्छा वाले मुमुक्षु श्रीराम नाम ही की सहायता से परम पद
को प्राप्त हो सकता है श्रेष्ठ कबियों के बचन का एक मात्र विश्राम
स्थान है इसीको पाकर बचन से बिश्राम लेकर सुखी होते हैं और
सज्जनों का तो यही एक जीवन हैं धर्म बृक्षका बीज श्रीराम नाम
आप सबके ऐश्वर्य्य को अर्थात् अलौकिक आत्म साक्षात्कार रूप
कल्याण का देने वाला श्रीराम नाम होवै यह श्रीहनुमानजी का आशी-
र्वादात्मक मंगलाचरण है ॥१०॥

बाराह पुराणे शंकर वाक्यं पार्वतीं प्रति ।

दैवाच्छूकर शावके न निहतो म्लेक्षो जराजर्जरो
हा रामेण हतोस्मि भूमिपतितो जल्पं स्तनुं त्यक्त-
वान् तीर्णो गोष्पद वद्भवार्णवमहोनाम्नः प्रभा-
वात्पुनः किं चित्रं यदि रामनाम रसिकास्तेयांति
रामास्पदम् ॥ ११ ॥

बाराह पुराण में श्रीशंकरजी का बचन है। दैवयोग से किसी
शूकर के बच्चे ने किसी अन्य देशमें गये हुए रात्रि के समय म्लेक्ष को
मारा वह बृद्धा अवस्था से जर्जर था मुझे हराम ने मारा इस प्रकार
अपने साथियों को पृथ्वी में पुकारते पुकारते मर गया वह श्रीराम-
नाम के प्रभाव से संसार समुद्र को गौ के खुरके सदृश पार हो गया
यदि श्रीराम नामके रसिक जन प्रकृति मंडल से पार श्रीराम धामको
प्राप्त हों इसमें आश्चर्य ही क्या है ॥ ११ ॥

पद्म पुराणे ।

ये ये प्रयोगास्तंत्रेषु तैस्तैर्यत्साध्यते फलं ।
तत्सर्वं सिध्यतिक्षिप्रं रामनाम्नैव कीर्तनात् ॥१२॥

तंत्रों के बीचमें अनेक कार्य साधन के लिये जो जो प्रयोग लिखे हैं और उनसे जो जो फल सिद्ध होता है वह सब कीर्तन करने मात्रसे श्रीराम नाम द्वारा शीघ्र ही सिद्ध होता है ॥ १२ ॥

भूत प्रेत पिशाचाश्च बेतालाश्चेटकादयः ।
कूष्मांडा राक्षसा घोरा भैरवा ब्रह्म राक्षसाः ॥
श्रीराम नाम ग्रहणात् पलायंते दिशोदश ॥ १३ ॥

भूत, प्रेत, पिशाच तथा बैताल चेटिकादिक कूष्मांड घोर राक्षस भैरव ब्रह्म राक्षस ये जो जीवों के पीड़ा देने वाले हैं वे सब श्रीराम नाम के ग्रहण करने से भयभीत होकर दशो दिशामें भागते हैं ॥ १३ ॥

अध्यात्म रामायणे बालि वाक्यं श्रीरामं प्रति ।

यन्नाम विवशो गृहणन् म्रियमाणः परं पदं ।
याति साक्षात् सए बाद्य मुमूर्षोर्मेपुरः स्थितः ॥१४॥

मरते समय विवश होकर भी जिसके नाम लेने से परम पदको जाता है वही साक्षात्प्रभु मरने वाला जो मैं सो मेरे सामने खड़ा हैं मैं अपनी भाग्य की प्रसंशा कहाँ तक करूँ ।

नृसिंह पुराणे ।

राम नाम जपतां कुतो भयं सर्व ताप शमनैक भेषजं पश्यतात ममगात्रसन्निधौ पावकोपि सलिलायते धुना ॥ १५ ॥

नृसिंह पुराण में अपने पिता से प्रहलाद जी का बचन है कि हे पिताजी सब तापों के बिनाश करने का एक प्रधान औषध रूप श्रीराम नाम के जपने वालों को कहाँ से भय हो सकता है देखिये मेरे शरीर के समीप में सर्वदाहक प्रचंड अग्नि भी जलके समान इस समय में आचरण कर रहा है अर्थात् यह अग्नि हमें जलके समान शीतल हो रहा है ॥१५॥

ब्रह्म यामले ब्रह्मणो वाक्यं नारदं प्रति ।

राम नाम सदा नन्दो राम नाम सदा गतिः ।
राम नाम सदा तुष्टो राम नाम स्वरूपकः ॥१६॥
राम नाम परो वेदो राम नाम सदा शुचिः ।
राम नाम परो योगो राम नाम परो ध्वनिः ॥१७॥
राम नाम परं बीजं राम नाम परं जगत् ।
राम नाम परो मंत्रो राम नाम परा क्रिया ॥१८॥
राम नाम परो यज्ञो राम नाम परो जपः ।
राम नाम परं सारं रामो लक्ष्मी समावृतः॥१९॥

ब्रह्म यामल में ब्रह्माजी का बचन नारदजी के प्रति है कि हे वत्स श्रीराम नामही सदा आनन्द स्वरूप है राम नाम सबकी सदागति है राम नाम सदा प्रसन्न रूप है राम नाम ही बस्तुतः आत्मा का स्वरूप है ॥ १६ ॥ राम नाम पर वेद है अर्थात् जिसने श्रीराम नाम का जप किया उसने वेद बोधित सब कर्म कर लिये अथवा श्रीराम नामही सब वेदों का परिनाम तात्पर्य्य है राम नाम सदा पबित्र है अपने जपने वालों को सदा पबित्र करता है राम नामही पर ध्वनि है ॥ १७ ॥ राम नाम पर बीज है अर्थात् सबका आदि कारण है राम नाम ही जगत में पर सर्वोत्तम बस्तु है राम नाम सर्वोत्तम ही है राम नाम सब क्रियाओं में परक्रिया है अर्थात् राम नाम परायण सब क्रिया करने वालों में श्रेष्ठ है ॥ १८ ॥ राम नाम पर यज्ञ है अर्थात् राम नामका जप सब यज्ञों में श्रेष्ट है 'यज्ञानां जप यज्ञोस्मि' इस भगवद्वचन प्रमाण से प्रसिद्ध है राम नामही पर जप है राम नाम परमसार है क्योंकि श्रीराम नाम सबकी लक्ष्मी शोभा, तेज, प्रतापादि से समावृत अर्थात् युक्त है ॥ १९ ॥

काशी खण्डे ।

पेयं पेयं श्रवण पुटके राम नामाभि रामं ध्येयं

ध्येयं मनसि सततं तारकं ब्रह्म रूपं। जल्पन् जल्पन्
प्रकृति विकृतौ प्राणिनां कर्णमूले। वीथ्यां वीथ्या-
मटति जटिलः कोपि काशी निवासी ॥ २० ॥

हे सज्जनों अभिराम रूप श्रीराम नामको श्रवण पुटसे पान करो पान करो यह पेय है मनमें निरंतर तारक ब्रह्मरूप श्रीराम नाम ध्येय है ध्येय है अर्थात् ध्यान करने योग्य है इस प्रकार प्रकृति मात्रमें प्राणियों के कर्णमूल में जल्पना करते हुए अर्थात् कहते हुए रास्ते रास्ते में जटाधारी कोई एक काशी निवासी अर्थात् श्रीशिवजी बिचरते हैं ॥ २० ॥

सनत्कुमार संहितायां श्रीवेद व्यास वाक्यं युधिष्ठिरं प्रति ।

श्रीरामेति परं जाप्यं तारकं ब्रह्म संज्ञकम् ।
ब्रह्म हत्यादि पापघ्न मिति वेद विदो विदुः ॥२१॥
श्रीराम रामेति जना ये जपंति च सर्वदा ।
तेषां भुक्तिश्च मुक्तिश्च भविष्यति न संशयः ॥२२

सनत्कुमार संहिता में श्रीव्यासजी ने युधिष्ठिरजी से कहा है कि श्रीराम यह पर जाप्य है क्योंकि इसकी तारक ब्रह्म संज्ञा है और ब्रह्म हत्यादि पापों का नाश करने वाला है यह वेद के जानने वाले जानते हैं ॥ २१ ॥ इस कारण श्रीराम राम इस प्रकार जे जन सर्बदा जपते हैं उनको भुक्ति मुक्ति प्राप्त होगी इसमें कुछ संशय नहीं है ॥२२॥

—***—

हिरण्य गर्भ संहितायां अगस्त्य वाक्यं सुतीक्ष्णं प्रति ।

अभिरामेति यन्नाम कीर्तितं विवशैश्च यैः ।
तेपि ध्वस्ताखिलाघौघा यांति विष्णोः परंपदं ॥२३

श्रीरामेति परं मंत्रं तदेव परमं पदं ।
तदेवतारकं विद्धि जन्म मृत्यु भयापहं ॥२४॥
श्रीरामेतिं बदन्ब्रह्म भावमाप्नोत्य संशयं ।
तत्व विद्यार्थिनो नित्यं रमंते चित् सुखात्मनि ॥२५
इति रामपदेनासौ परब्रह्माभिधीयते ॥२६॥

हिरण्य गर्भ संहिता में श्रीअगस्त्यजी ने सुतीक्ष्णजी से कहा है कि हे वत्स अभिराम यह श्रीरामजी का नाम जिन्होंने बिवश होकर भी कीर्तन किया है वे सब पापोंको नाश कर श्रुति प्रतिपाद्य तद्विष्णोः परमं पदं नित्य भगवद्धाम को प्राप्त होते हैं ॥२३॥ श्रीराम यह पर मंत्र है अर्थात् इससे श्रेष्ठ कोई भी मंत्र नहीं है वही परं पद है अर्थात् ब्रह्मका रूप है तिसी को तुम तारक जानों क्योंकि यह मंत्र जन्म, मृत्यु आदि भयका छोड़ाने वाला है ॥२४॥ इसीसे श्रीराम इस नामको कहते हुए निस्सन्देह ब्रह्म भावको प्राप्त होता है तत्व बिद्या के चाहने वाले योगि जन चित्सुखात्म रूप श्रीराम नाममें नित्य रमते हैं इसी कारण से ये श्री दाशरथि राम रामपद वाच्य होने से परब्रह्म कहे जाते हैं ॥ २६ ॥

—***—

श्रीरामतापनीयोपनिषदि ।

रमंते योगिनोनंते सत्यानन्दे चिदात्मनि ।
इतिराम पदे नासौ परब्रह्माभिधीयते ॥ २७॥

श्रीराम तापनीयो पनिषद् में लिखा है कि अनंत त्रिविधि परिच्छेद शून्य तथा सत्यानन्द चिद्रूप में योगी लोग रमण करते हैं इस हेतु राम पदसे ये श्रीचक्रवर्ति कुमार श्रीरामजीही परब्रह्म कहे जाते हैं अर्थात् रामशब्द ब्रह्मशब्द एकार्थ बाचक हैं तात्पर्य्य यह है कि जिस प्रकार रामशब्द परब्रह्म का रमयितृत्व गुणसे मुख्य बाचक है इस प्रकार से दूसरा नाम नहीं अतएव राम शब्द वाच्य ही परब्रह्म है ॥२७॥

———

श्रीअध्यात्म रामायणे बशिष्ठ वाक्यं, श्रीदशरथं प्रति ।

यस्मिन् रमंते मुनयो विद्यया ज्ञान बिप्लवे ।
तं गुरुः प्राह रामेति रमणाद्राम इत्यपि ॥२८॥

अध्यात्म रामायण बाल कांडमें श्रीचक्रवर्ति महाराज से श्रीबशिष्ठजी का वाक्य है कि. शास्त्र मननशील मुनिबृन्द ज्ञान-प्रकाश से अज्ञान का विप्लव अर्थात् विनाश है जिसमें ऐसे परब्रह्म में नित्य रमते हैं तिन्हीं को गुरू महाराज ने श्रीराम यह नाम कहा। सबमें रमण किये हुये हैं इससे भी राम हैं। अर्थात् मुनियों के रमण स्थान होने से अथवा सर्वभूतों में रमण करने से श्रीराम यह परब्रह्म का मुख्य नाम है॥ २८ ॥

महाशंभु संहितायां श्रीरामचन्द्रं प्रति, श्रीजानकी वाक्यं ।

प्रणवं केचिदाहुर्वै वीजं श्रेष्ठं तथा परे ।
तत्तु ते नाम वर्णाभ्यां सिद्धिमाप्नोति मे मतम् ॥२९॥
रामेति नाम मात्रस्य प्रभावमति दुर्गमं ।
मृगयंतितुयद्वेदाः कुतो मंत्रस्य ते प्रभो ॥३०॥

महाशंभु संहिता में श्रीरामजी के प्रति श्रीजनकात्मजाजी का वचन है कि कोई प्रणव को श्रेष्ठ कहते हैं तथा अपर बीज को श्रेष्ठ कहते हैं परंच वे दोनों आपके नाम बर्णों से अर्थात् रकार मकार से सिद्धि को प्राप्त होते हैं यह हमारा मत है तात्पर्य्य यह है कि बीज और प्रणव को श्रेष्ठ कहने वाले आपके नामके प्रभाव को नहीं जानते हैं ॥२९॥ राम इस नाम मात्रका प्रभाव अति दुर्गम है कि जिसको आज तक वेद खोज रहे हैं अभी तक अन्त नहीं पाया है प्रभो फिर आपके मंत्रका प्रभाव कैसे जान सकेंगे ॥ ३० ॥

श्रीमन्महा रामायणे शिव वाक्यं पार्वतीं प्रति।
अशांशैराम नाम्नश्च त्रयः सिद्धा भवंतिहि ।
वीजमोंकारः सोहं च सूत्रमुक्त मितिश्रुतिः ॥३१॥
परमेश्वर नामानि संत्यनेकानि पार्वति ।
परंतु राम नामेदं सर्वेषामुत्तमोत्तमम् ॥३२॥
रामस्यैवरमुक्रीड़ा नाम्नोनान्यस्य जायते ।
जीवोत एव रामस्य स्मरणेनगतिं व्रजेत् ॥३३॥

श्रीमहा रामायण में पार्वतीजी से श्रीशिवजी का बचन है कि हे प्रिये श्रीराम नामके अशांश से बीज ओंकार सोहं ये तीनों मंत्र सिद्ध होते हैं इसमें शब्दानुशासन विधायक ऋषियों के सूत्र हैं यह श्रुति प्रसिद्ध है श्रुति शब्द से यहां परंपरा श्रवण जानना चाहिये ॥३१॥ हे पार्वति परमेश्वर के अनंत नाम है सब परमेश्वरही को कहते हैं परन्तु यह श्रीराम नाम सब नामों से उत्तम में भी उत्तम है ॥३२॥ क्योंकि रमुक्रीड़ा इस धातुका अन्वर्थ परिभाषा समन्वित श्रीराम नामही में है अतएव श्रीराम नाम के स्मरण से ही जीव शीघ्रही गति अर्थात् परं पदको प्राप्त होता है यहां पर सद्य इस पदका अध्याहार जानना चाहिये क्योंकि भगवन्नाम सभी मुक्ति प्रद हैं यह सिद्धान्त है परंच वे कुछ विलंब से गति देंगे रामनाम सद्यः सुगति देता है ॥३३॥

बृहत् मनुस्मृतौ ।

सप्त कोटि महामंत्राश्चित्तविभ्रम कारकाः ।
एक एव परो मंत्रो रामइत्यक्षर द्वयम् ॥३४॥
यन्नाम संसर्ग वशाद्विवर्णौ नष्ट स्वरौ मूर्न्द्धि गतौ स्वाराणां ।
तद्राम पादौ हृदि सन्निधाय देहि कथं नोर्द्धव गतिं प्रयाति ॥ ३५ ॥

बृहत् मनुस्मृति में वृद्ध मनु का वचन है कि सात करोड़ महा-मंत्र प्रधानतया गनाये जाते हैं परंच एक सदृश प्रभाव कहने से वे सब चित्त में विश्रांति बढ़ाने वाले हैं इस हेतु एकही सब मंत्रों में पर मंत्र है जो कि राम ये दो अक्षर वाला है ॥ ३४ ॥ जिसके नामके संसर्ग पा जाने से दो वर्ण अर्थात् रकार मकार नष्ट स्वर हो जाने पर स्वरविशिष्ट अन्य वर्णों के मूर्द्धा शिरो भागमें रेफबिन्दु होकर प्राप्त होते हैं अन्य वर्ण स्वर नष्ट होने से वर्णों के नीचे जाते हैं जिसके नाम के वर्णों में यह प्रभाव है तिस श्रीरामजी के चरणार्विन्दों को हृदय में धरेगा वह देही क्यों न ऊर्द्ध गति को प्राप्त होगा ॥ ३५ ॥ स्मृतियों में प्रायः पूर्वार्द्ध उत्तरार्द्ध दो भाग हैं कोई कोई तो एकही ऋषि के हैं कोई कोई पूर्वार्द्ध उत्तरार्द्ध भिन्न भिन्न ऋषि प्रणीत हैं यह बृहद् मनुस्मृति मनुस्मृति का उत्तरार्द्ध है ॥

पद्म पुराणे शिव वाक्यं पार्वतीं प्रति ।

राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे ।
सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम बरानने ॥३६॥

पद्म पुराण के उत्तर खण्ड में सविस्तार आख्यायिका है उसमें श्रीशिवजी ने श्रीपार्वतीजी से कहा है कि हे बरानने हे रामे हे मनोरमे अहं रामे राम नाम्नि अति रमे कथं राम राम इति कस्मात् यत्सहस्र नाम तत्तुल्य राम नाम हे बरानने हे रामे हे मनोरमे मैं श्रीराम नाम में अतिशय रमण करता हूँ कैसे राम राम ऐसा कह कर क्योंकि और नाम जो हजार हैं। तो एक राम नाम उनके बरा-बर है ॥ ३५ ॥

श्रीबाल्मीकीय रामायणे टीकायाम् ।

रामेति वर्णद्वय मादरेण सदा स्मरन्मुक्तिमुपैति जन्तुः। कलौयुगे कल्मषमानसानां मन्यत्र धर्मे खलुनाधिकारः ॥३७॥

श्रीबाल्मीकीय रामायण के पाठकजी के टीका में यह श्लोक है कि राम ये दो वर्ण सदा स्मरण करते हुए जंतु अर्थात् जीव मात्र मुक्ति को प्राप्त होता है कलियुग में पापसे युक्त मन होने के कारण पुरुषों का अन्य धर्मों में अधिकार नहीं है जब धर्मके सर्वथा अनधिकारी हैं तब धर्म उन्हें फल कैसे दे सकेगा अतः कलियुग में श्रीराम नामही सर्व धर्मोत्पत्ति पूर्वक मुक्ति देने में समर्थ हैं॥ ३७॥

अन्यच्च ।

नाम्नोस्ति यावती शक्तिः पाप निर्दहने हरेः ।
तावत्कर्तुं न शक्नोति पातकं पातकी जनः ॥३८॥

श्रीहरि नामकी पाप जलाने में जितनी शक्ति है उतने पातक कोई भी पातकी जन नहीं कर सकता है ॥३८॥

श्रुतिः ।

यश्चांडालोपिरामेति वाचंवदेत् तेनसह संवसेत् ।
तेनसह संवदेत् तेनसह संभुंजीयात् ॥ ३६ ॥

श्रुतिका सिद्धान्त है कि जो चांडाल भी श्रीराम राम इस प्रकार से बाणी कहैं अर्थात् निरंतर राम नाम रटै तो उसके साथ निवास करै तिसके साथ संभाषण करै तिसके साथ एक पंक्ति में बैठ कर भोजन करै तात्पर्य्य यह है कि पतित चांडाल आदिकोंके साथ संबास संभाषण, सह भोजन शास्त्र में निषिद्ध है पर यदि श्रीराम परायण हो तो उसके साथ असन, संबास, भाषण में कोई प्रकार का दोष नहीं है॥ ३९॥

श्रीमन्मानस रामायणे आरण्य कांडे श्रीगोस्वामि तुलसीदास कृते नारद वाक्यं श्रीरामं प्रति ।

राका रजनी भक्ति तब, राम नाम सोइ सोम ।
अपर नाम उड़गन बिमल, बसो भक्त उर व्योम॥ ४०

श्रीमानस रामायण में नारदजी का वचन श्रीरामजी से है कि हे श्रीरामजी महराज आपकी भक्ति शरद पूर्णमासी की रात्रि है श्रीराम नाम यही चन्द्रमा है अपर भगवन्नाम विमल तारागण है इस प्रकार से भक्तों के हृदय रूप आकाश में सदा निवास करें ॥४०॥

अति गीतिका छन्द ।

करु मन राम नाम बिचार ॥ टेक ॥
नहिं आन औषध जीव कहँ तन दुरलभो सो असार।
धर्म मूल सुभक्त कामद भक्ति को शृंगार ॥
कल्याण घन कलिमल दहन धन संत सर्व उदार ।
हा राम कहि शूकरहिं जमनसो भयो भवनिधि पार ॥
श्रुति मंत्र तंत्रहि साधि सो फल राम नाम उचार ।
राम कहत पिशाच सब भागि जात करत पुकार ॥
अघ रूप जो कहि नाम बिबसहु अंत तरत न बार ।
राम कहत न भयअनिल नभ अगिनि थल जलधार ॥
राम नाम अनन्द पर श्रुति तंत्र शास्त्रन्ह सार ।
मंत्र पर ध्वनि बीजके पर राम नाम प्रचार ॥
प्रभु हेतु साधन विविधि सबके राम नाम अधार ।
योग ज्ञान समाधि जप पर नाम तारक तार ॥
अलसाय अनखहुं नाम कहि जरि जात पाप पहार।
राम कहतहि ब्रह्म भावित मिटत त्रिगुन विकार ॥
राम नामै जीव ब्रह्म सो रमेउ सब संसार ।
जोगीस मुनि जहँ रमहिं जियते रामनाम सम्हार॥

राम नामै हेतु दोउ कर बीज अरु ओंकार ।
राम नाम प्रभाव नहिं कहि सकत निगमागार ॥
राम नामहि छोड़ि अपर भरोस सब जगजार ।
रामचरण जो राम नहिं कह तासु मुख भरि छार ॥४१

इति श्रीराम नवरत्न सार संग्रहे श्रीराम नाम सूक्ष्म बर्णनंनां प्रथमं रत्नम् ।

सोरठा ।

सब अवतार उदार अंश कला सब राम के ।
जीव ब्रह्म के पार अवतारी अवतार मणि ॥

श्रीकरुणासिन्धु महाराज कहते हैं कि सब अवतार उदार हैं अर्थात् जीवों की रक्षा मोक्षादि के दानमें सब उदार हैं और सब श्रीरामजी के अंशकला हैं इस हेतु जीव ब्रह्ममय प्रकृति मंडल सतावरण से पर नित्य धाममें अवतारों के मणि अवतारी श्रीरामजी बिराजते हैं यह द्वितीय रत्नका सारांश सोरठा में दिखाया ।

तत्र प्रमाणं ययुर्वेदीय सुदर्शन संहितायाम् ।
मत्स्यश्च राम हृदयं तपो गुरु जनार्दनः ।
कूर्मश्चाधार शक्तिश्च वाराहो भुजयोर्बलं ॥ १ ॥
नरसिंहो महाकोपो वामनः कटि मेखला ।
भार्गवो जंघयोर्जातो बलरामश्च पृष्ठतः ॥ २ ॥
बौद्धश्चकरुणः साक्षात् कल्की चित्तस्य हर्षितः ।
कृष्णः शृंगार रूपश्च वृन्दाबन विभूषणः ॥ ३ ॥
एतेश्चांशकला चैव रामस्तु भगवानस्वयम् ॥४॥

यजुर्वेद के गूढ़ार्थ उपबृंहण भूत सुदर्शन ऋषि प्रणीत सुदर्शन संहिता में यह लिखा है कि मत्स्यावतार श्रीरामजी का हृदय है जो कि तप रूप हैं, गुरू है तथा जनों के दुःख का नाशक जनार्दन रूप हैं कूर्मावतार श्रीरामजी की आधार शक्ति हैं बाराह अवतार भुजाओं का बल हैं ॥ १ ॥ नृसिंह भगवान महा कोप हैं वामन अवतार कटि मेखला हैं भार्गव परशुराम जंघा का बल हैं बलरामजी पृष्ठ से हैं ॥२॥ बौद्ध अवतार साक्षात् करुणा हैं कल्की भगवान चित्तका हर्ष हैं और बृन्दाबन बिभूषण श्रीकृष्ण भगवान शृङ्गार रूप हैं ॥३॥ ये सब अवतार कोई तो श्रीरामजी के अभिन्नांश हैं कोई कला हैं श्रीरामजी तो स्वयं भगवान हैं अर्थात् पर हैं सब अवतारों के मूल कन्द हैं ॥४॥

साम वेदे भरद्वाज संहितायाम् ।

अवतारा बहवः संति कलाश्चांश बिभूतयः ।
राम एव परं ब्रह्म सच्चिदानन्द मव्ययम् ॥५॥
सर्वेषामवताराणामवतारी रघूत्तमः ।
सरितां सर्व मध्येतु सरयू पावनी यथा ॥ ६ ॥

सामवेद की उपबृंहण भूत भरद्वाज संहिता में लिखा है कि अवतार बहुत हैं कोई कला हैं कोई अंश हैं कोई विभूति हैं अव्यय सच्चिदानन्द परंब्रह्म श्रीरामजी ही हैं ॥५॥ क्योंकि सब अवतारों के अवतारी श्रीरघूत्तम हैं। जैसे सरिता सबों के बीचमें परम पावनी श्रीसरयू हैं ॥६॥

अथ ऋग्वेदे श्रीहनुमत्संहितायां हनुमद्वाक्यं अगस्त्यं प्रति ।

तुरीया जानकी प्रोक्ता तुरीयो रघुनन्दनः ।
उभयोरंशजाः सर्वे चावताराह्य सख्यकाः ॥ ७ ॥
सर्वेषामवताराणामवतारी रघुत्तमः ।
श्रुतं दृष्टं मयासर्वं चिराय जीवनान्मुने ॥ ८ ॥

ऋग्वेद उपबृंहण भूत श्रीहनुत्संहिता में श्रीहनुमानजी का वचन श्रीअगस्त्यजी से है कि श्रीजानकीजी तुरीया कही गई हैं श्रीरघुनन्दनजी भी तुरीय रूप हैं असंख्य सब अवतार इन दोनों के अंश से उत्पन्न होते हैं ॥ ७ ॥ सब अवतारों में श्रीरघूत्तम अवतारी हैं चिरजीवन होने से हमने यह देखा है और सब सुना है ॥ ८ ॥

अथ अथर्वण वेदेसनक सनातन संहितायाम् ।

चैत्र मासे नवम्यांतु शुक्ल पक्षे रघूत्तमः ।
प्रादुरासीत् परं ब्रह्म परब्रह्मैव केवलम् ॥९॥

अथर्बण वेदोपबृंहण भूत सनक सनातन संहिता में लिखा है कि चैत्र मास शुक्ल पक्षके नौमी में श्रीरघूत्तम परब्रह्म प्रगट भये जो कि केवल परब्रह्म हैं अर्थात् अंश कला नहीं किन्तु सबके कारण हैं ॥९॥

अगस्त्य संहितायां अगस्त्य वाक्यं सुतीक्ष्णं प्रति।

यथाह्यादि प्रदीपेन सर्व दीप प्रबोधनं ।
तथा सर्वावताराणा मवतारी रघूत्तमः ॥१०॥

वेद की चारो संहिताओं का सिद्धान्त कह कर अब अन्य संहिताओं का प्रमाण देते हैं अगस्त्य संहिता में सुतीक्षणजी से श्रीअगस्त्यजी का बचन है कि जैसे पहले प्रदीप से सब दीप प्रज्वालित होते हैं सब एक समान होने पर भी पहला दीप कारण कहा जाता है इसी तरह सब अवतारों के आदि कारण अवतारी श्रीरघूत्तम हैं ॥१०॥

यथा सर्वावताराणा मवतारी रघूत्तमः ।
तथा सर्वेषु तीर्थेषु पावनी सरयू सरित् ॥ ११ ॥
यावन्न जायते तस्याः स्नानपान निषेवणम् ।
तावन्न जानकीनाथे प्राप्यते भक्तिरुत्तमा ॥१२॥

अयोध्या च परंब्रह्म सरयू सगुणः पुमान् ।
तत्रबासी जगन्नाथः सत्यमेतद्‌ब्रवीमिते ॥१३॥

जैसे सब अवतारों में अवतारी श्रीरघूत्तम हैं तैसे ही सर्व तीर्थों में श्रेष्ठा पावनी श्रीसरयू सरित हैं ॥११॥ जबतक सरयू का स्नान पान सेवन नहीं होता है तब तक श्रीजानकीनाथ में उत्तम भक्ति नहीं प्राप्त होती है ॥ १२ ॥ क्योंकि अयोध्या परंब्रह्म हैं सरयू सगुण पुरुष हैं तिसमें बसने वाले ही जगन्नाथ हैं यह मैं तुमसे सत्य कहता हूँ ॥१३॥

———

सदा शिव संहितायां सौमित्रि वाक्यं वेदान्प्रति ।
सर्व सौभाग्य निलयं सर्वानन्दैक नायकं ।
कौशल्या नन्दनं रामं केवलं भव खण्डनम् ॥१४
विश्वावसुचित्रकेतु चित्रसेनाद्युलूककैः ।
तुम्बुरै नारदाद्यैश्च शुकपिक सुकण्ठकैः ॥१५॥
गीयमानंपरंतत्वं श्रुति जाति विशारदैः ।
अनंतांश समुद्भूत मुनिनाक्षर रूपिणा ॥१६॥
संगीयमानं विनयाद्वाल्मीकिनांतरात्मना ।
मत्स्य कूर्म वराहैश्च नृसिंह हरि वामनैः ॥१७॥
भार्गवहलिकंसारि बुद्ध कल्किभिरुद्यतैः ।
उपास्यमानं देवेशं देवानां प्रवरं विभुम् ॥१८॥

सदा शिव संहिता में श्रीलक्ष्मणजी का बचन वेदों से है कि सर्व सौभाग्य के स्थान सर्व आनन्दों के स्वामी अर्थात् दाता कौशल्या नन्दन श्रीरामजीही केवल संसार के खण्डन करने वाले हैं ॥१४॥ विश्वा बसु चित्रकेतु चित्रसेन उलूकक तथा तुम्बुर नारदादि शुक-पिक सुकण्ठादि गन्धर्वों से गीयमान परतत्व श्रीरामजी हैं ये गन्धर्व गण को श्रुति जाति में विशारद हैं उन्होंने परतत्व श्रीरामजी ही को

ठहराया ॥१५॥ अनंतांश से समुद्भूत अक्षर रूपी पतंजलि मुनि ने भी इन्हीं को परतत्व कहा है ॥१६॥ श्रीबाल्मीकिजी ने भी अंतरात्मा से बिशेष नीति के साथ श्रीरामजी ही को परतत्व गाया है॥१७॥ मत्स्य, कूर्म, बाराह, नृसिंह, हरि, वामन, परशुराम हलधर कंसारि श्रीकृष्ण भगवान इन सबों से उपास्यमान सर्व देवेश देवों में श्रेष्ठ सर्व व्यापक ब्रह्म श्रीरामजी को ही सबने बतलाया है ॥१८॥

तत्र बागीश्वरी देबी माधवी प्रियबल्लभा ।
असिता च सिता चैव प्रकृतिर्गुण सम्भवा ॥१९॥
उमादेबी महामाया श्रुति जात बिशारदा ।
पद्महस्ता बिशालाक्षी कमला हरि बल्लभा ॥२०
सुरभी प्रेमदा नित्या वृन्दादेबीमनोरमा ।
चिदात्मकं सदाभासं नयनानन्द दायकम् ॥२१
स्वकांतं हृदयारामं रामं राजीव लोचनम् ।
निर्विकारं पृथु श्रोण्यो राघवं पर्युपासते ॥२२॥

तहां पर श्रीबागीश्वरी देबी माधवी, प्रिय बल्लभा, असिता, तथा सिता एवं गुण संभवाप्रकृति ॥१९॥ उमा देवी, महामाया ये जो श्रुति मूर्छनादि में प्रवीणा हैं पद्म हस्ता, बिशालाक्षी, श्रीकमलाजी जो कि श्रीरामजी को अति बल्लभा हैं ॥२०॥ सुरभी प्रेमदा, नित्या, वृन्दादेवी तथा मनोरमाजी इत्यादि पृथु श्रोणि सखियों के बृन्द चिदात्मक, सदा प्रकाश रूप, नयनानन्द दायक निर्विकार हृदय के रमाने वाले राजीव लोचन, रघुकुलोद्भव अपने कांत श्रीरामजी की नित्य उपासना करती हैं ॥२२॥

उर्बशी मेनका रम्भा राधा चन्द्रावली तथा ।
हेमा क्षेमावरारोहा पद्मगंधाः सुलोचनाः ॥२३॥
हंसिनी मालिनी पद्माहरिणी मृग लोचनाः ।
रामस्य परिनृत्यंति गीत बादित्र मोहिताः ॥२४

इसी तरह उर्वसी, मेनका, रम्भा, राधा, चन्द्रावली, हेमा क्षेमा, बरारोहा, पद्म गंधा, सुलोचना ॥२३॥ हंसिनी, मालिनी, पद्मा हरिणी ये सब मृगनयनी श्रीरामजी के पास गीत बादित्र से मोहित हुई नृत्य कर रही हैं ॥२४॥

कर्पूरांगी विशालाक्षी शक्तिप्रियारसोत्सवा ।
चारु नेत्रा चारु गात्रा चार्वंगी चारु लोचना ॥२५
गोप कन्या सहस्रैस्तु गोप बालैश्च तादृशैः ।
गोकुलैरावृतं सम्यक् पद्म शंखादिभिः सदा ॥२६
अंगादि परिसंकीर्णं आत्मादि शक्ति रंजितम् ।
वेष्टितं बासुदेवाद्यैः सेवितं हनुमदादिभिः ॥२७

कर्पूरांगी, बिशालाक्षी, शक्ति प्रिया, रसोत्सवा, चारुनेत्रा, चारु गात्रा चार्वंगी, चारु लोचना ॥२५॥ इन सबों से तथा हजारहों गोप कन्या तैसे ही गोप बालकों से एवं गो समूहों से सदा आवृत पद्म शंखादि निधियों से सेवित ॥२६॥ सर्ब अंगों से संकीर्ण आत्मादि शक्तियों से रंजित, बासुदेवादि स्वमूर्ति भेदों से वेष्टित हनुमदादि पार्षदों से सेवित श्रीरामजी को देखा यह पूर्व से संबंध है ॥२७॥

महा सुन्दरी तंत्रे श्रीजानकी वाक्यं जनकं प्रति ।

मत्तो नारायणो बिष्णुरात्मानं कतिधा स्रजत् ।
तेषु तात विशिष्टा ये अवतारा: हरेर्दश ॥२८॥
द्वयं बनचरं ज्ञेयं द्वयं जलचरं तथा ।
क्षोणिपाश्च त्रयो ज्ञेया विप्रबंशोद्भवास्त्रयः ॥२९॥
म्लेक्षादीनां निहंतारो हरे रंशाः क्रमाद्दश ।
सात्विकीं राजसीमुग्रान्तामसीं योनिमाश्रिताः ॥३०

एतेतु प्रभवः शौर्य्य वीर्य्य शक्ति समन्विताः ।
सृष्टिस्थितिलयानांच कर्तारः प्रथिताः किल ॥३१
एतेभ्यः परतो नित्यो रामः सदसदात्मकः ।
रहस्यमेतद् गुह्यंते कथितंप्रिय काम्यया ॥३२॥

महा सुन्दरी तंत्रमें श्रीविदेह नन्दिनीजी का बचन श्रीविदेहजी से है कि हे तात हमारे सहित श्रीरामजी से उत्पन्न होकर नारायण तथा बिष्णु भगवान ने कितने अवतार लिये जिनकी संख्या करना असम्भव है तिन सबों में हे तात श्रीहरि के दश अवतार विशेष हैं ॥२८॥ नृसिंह, बाराह दो बनमें रहने वाले, मत्स्य, कच्छप दो जलमें रहने वाले। श्रीराम, कृष्ण, बुद्ध ये तीन पृथ्वी के पालक हैं। अर्थात् क्षत्रिय हैं बामन, परशुराम, कल्कि ये तीन विप्र बंशोद्भव हैं॥२९॥ यद्यपि बुद्ध भगवान भी ब्राह्मण ही हैं परंच म्लेक्षों से पृथ्वी को छीन कर पालन किया इस हेतु कर्म से क्षत्री कहे गये। म्लेक्षादिकों के मारने वाले श्रीहरि के क्रमसे ये दश अवतार कहे गये कोई सात्विकी, कोई राजसी कोई उग्र तामसी योनि में आश्रित हुए ॥३०॥ ये सब प्रभुत्व, शौर्य्य शक्ति ज्ञानादि गुणों से समन्वित हैं और सृष्टि, स्थिति लय आदि कार्यों के करने वाले प्रसिद्ध हैं ॥३१॥ परंच कार्य्य कारण रूप इन सबों से श्रीरामजी नित्य परतम हैं यह रहस्य अति गोप्य आपकी प्रिय कामना से मैंने कहा है ॥३२॥

श्रीजनक उवाच ।

मत्स्याद्या ईश्वराः प्रोक्तास्तेभ्यो रामः परः पुमान् ।
कथमेतद् विजानामि तव पुत्रि प्रसादतः ॥३३॥

श्रीबिदेह महाराज प्रश्न करते हैं कि हे पुत्रि ज्ञान शक्त्यादि गुण युक्त मत्स्यादि अवतार भी ईश्वर हैं पर तिन सबों से श्रीरामजी पर पुरुष हैं यह मैं तुम्हारे कृपा से कैसे जान सकूँ सो कहिये॥३३॥

श्रीजानक्युवाच ।

विष्णोरद्भुत वीर्यस्य मत्स्य कूर्म कुलादिषु ।
अंशावतारास्तेसर्वे बिना रामं रघूद्वहम् ॥३४॥

मच्छकूर्म्याप्रतिरुद्धानां मत्स्यादीनांहि पार्थिव ।
जन्म कार्य्यांतरप्राप्ति स्वरूपं तेषु जायते ॥३५॥
सारभो योगिनी नक्रः नर्य्यो व्याधस्तथा बलः ।
कालः कलयतां तेषां तनभुक् प्रभुरव्ययः ॥३६॥
रामः कालात्मकः श्रीमान् सर्व भूत शरीर भुक् ।
इति विज्ञापितं तात यथायोग्यं तथा कुरु ॥३७

श्री मैथिलीजी बोलीं कि हे तात अद्भुत वीर्य्य वाले श्रीविष्णु भगवान के मत्स्य कूर्मादि सब अवतारों में रघूद्वह श्रीरामजी को छोड़ कर सब अंशावतार हैं ॥३४॥ परात्पर तर ब्रह्म की परात्परतरा शक्ति हम हैं जो अवतार होते हैं वे शक्ति सहित होते हैं कहीं पर शक्ति प्रगट हैं कहीं पर अप्रगट हैं इस हेतु सब अवतार हमारी शक्ति से प्रतिरुद्ध जानो तस्मात् हे पार्थिव मत्स्यादि अवतारों का कर्य्यान्तर प्राप्ति स्वरूप तिन सबों में शक्ति विशिष्ट ही होता है ॥३५॥ फिर श्रीरामजी कैसे हैं कि सारभः सारस्य चैतन्य रूपस्य जीवस्य भा दीतिर्यस्मात् असौसारभः सार चैतन्य रूप जो जीव उसके भी प्रका-शक हैं फिर कैसे हैं योगिनी नक्रः । योगिनी जो माया उसके भी नक्र समान ग्रहण करने वाले हैं । और अनार्य्य अर्थात् नहीं है आर्य्य नाम श्रेष्ठ जिनसे कोई इससे अनार्य्य नाम है तथा अव्याधः अर्थात् कुटि-लता रहित हैं। तथा बल रूप हैं अर्थात् सबके शक्ति प्रदीपक हैं। और जितने प्रेरक चलाने वाले हैं उनके भी प्रेरक हैं अर्थात् काल रूप हैं। और उन सबों के शरीरों के भोक्ता अव्यय प्रभु श्रीरामजी हैं ॥ ३६ ॥ श्रीरामजी काल स्वरूप हैं इसीसे श्रीमान् तथा सर्वभूत शरीर भोक्ता हैं हे तात यह आपसे जनाया जैसा आप समझैं वैसा करैं ॥ ३७ ॥

न ब्रह्मणस्तुतिर्देव देवानामभयोह्यपि ।
न जीवकर्म वैषम्यं निमित्तं तात बुद्धयते ॥३८

परब्रह्म श्रीरामजी की यह स्तुति नहीं कही गई है प्रत्युत जैसे हैं वैसे कोई कह नहीं सकता है क्योंकि ब्रह्मादि देवों के अभय प्रदाता वही हैं जीवों के कर्म वैषम्य निमित्त भी नहीं जाने जाते हैं ॥३८॥

राघवस्याप्रमेयस्य दृष्टा दृष्टं बिजानतः ।
गतिं प्रद नरेन्द्रस्य सुप्रकाशस्य धीमतः ॥३९॥
अहंतु वशगायस्य जगदानन्द कारिणी ।
पालयामिसृजाम्यद्य सर्व भूतानि हन्मिच ॥४०
लीलया मे जगत्सर्व मनुग्रहाय हरस्य च ।
अंताय रक्षसां तात सोवतीर्णः स्वयं बिभुः ॥४१

दृष्ट अदृष्ट सबके यथार्थ जानने वाले सुप्रकाश अप्रमेय धीमान् नरेन्द्र श्रीराघव के स्वरूप ज्ञानके प्रति सभी मोहित होते हैं ॥३९॥ और हम उन्हीं के बश रहकर जगदानन्द कारिणी हैं सब भूतों को उत्पन्न करना, पालन करना, तथा संहार करना यह हमारे आधीन है ॥४०॥ हमारे लीला से जगत होता है श्रीरामजी स्वयं व्यापक ब्रह्म हैं श्रीमहादेवजी तथा भक्तों के अनुग्रहार्थ राक्षसों के बिनाश के लिये स्वयं अवतीर्ण होते हैं ॥४१॥

श्रीजनक उवाच ।

पूर्वमुक्ता त्वयादेबिविभूतिर्दिव्य रूपिणी ।
ज्ञातं ज्ञेयं मयायिस्यात् प्रसादात्तवसुव्रते ॥४२॥

श्रीजनक महाराज बोले कि हे सुब्रते दिव्य रूपिणी बिभूति जो आपने पहले कही है तथा ज्ञेय मात्र जिस प्रकार आपके प्रसाद से हमको ज्ञात हो वह कहिये ॥४२॥

श्रीजानक्युबाच ।

महाशंभु र्महाविष्णु र्महामाया जलेशया ।
महानहं कृति र्विश्वं कारणानि च सर्बशः ॥४३
गुणत्रयं च प्रकृतिः सूर्य्येन्दु हव्य बाहनाः ।
ब्रह्माबिष्णुश्च रुद्रश्च देवेन्द्रा ऋषयस्तथा ॥४४

स्थावरा जंगमाश्चैव ये चान्येभूत भावनाः ।
एतेतावत् कलायोगिन् मम रामः स्वयंहरिः ॥४५
हरेरंशावताराणां कृत्यमेतत् सुनिश्चितम् ।
न प्रवृत्ति निवृत्यत्वं पद्म पत्र मिवांभसा ॥४६

श्रीजनकात्मजाजी बोलीं कि हे तात महाशंभु, महाबिष्णु, तथा प्रलयार्णव में सैन करने वाली महामाया महतत्व अहंकार और भी जो बिश्व के सब कारण हैं ॥४३॥ गुणत्रय, प्रकृति, सूर्य्य, चन्द्र, अग्नि, ब्रह्मा, बिष्णु, रुद्र, देवेन्द्र तथा ऋषि सब ॥४४॥ स्थावर जंगम और भी जो भूतों के पालक हैं हे योगिन् ये सब श्रीरामजी के अंशकला बिभूति हैं हमारे श्रीरामजी स्वयं हरि हैं ॥४५॥ दुष्ट निग्रह शिष्ट परिपालनादि श्रीहरि के अंशावतारों का यह सुनिश्चित कृत्य है बस्तुतः अवतारों में प्रबृत्ति निबृत्ति का संसर्ग नहीं है जैसे कमल के पत्रको जलके साथ संसर्ग नहीं होता है ॥४६॥

महाशंभु संहितायाम् अगस्त्य वाक्यं सुतीक्ष्णं प्रति ।

श्रीरामस्य कलांशाद्वै अवतारा भवन्तिहि ।
कोटिकोटिश्च कार्य्यार्थे सिन्धौ बीचीव वै मुने ॥४७
सीता कलांशात्सख्यश्च शक्तयः सम्भवन्तिताः ।
यासां कलाकलांशेन जाता नार्य्यश्चश्र्यादयः ॥४८
श्रीराम मंत्रस्यांशाश्च मंत्राश्चान्ये भवंतिहि ।

महाशंभु संहिता में श्रीअगस्त्यजी का बचन सुतीक्ष्णजी से है कि श्रीरामजी के अंशकला से कोटि कोटि अवतार कार्य्य के लिये समुद्र में बीची के तरह होते हैं यहां पर बीची समुद्र से पृथक देखने पर भी भिन्न तत्व नहीं है इसी तरह अवतारों में अभेद जनाया ॥४७॥ और श्रीजनकात्मजाजी के कला अंश से तत्तदवतारों की शक्तियां तथा नित्य पास बर्तिनी सखी सब होती हैं जिनके अंशकला से

जगत की बिभूति अधिष्ठात्रि श्रीआदि नारी होती हैं ॥४८॥ इसी तरह से अन्य सब मंत्र श्रीराम मंत्रके अंशसे होते हैं ॥४९॥

सनत्कुमार संहितायाम् वेद व्यास वाक्यं, युधिष्ठिरं प्रति ।

विज्ञानहेतुं बिमलायताक्षं प्रज्ञानरूपं स्वसुखैक हेतुम् ।
श्रीरामचन्द्रं हरिमादिदेवं परात्परंराममहंभजामि ॥५०
परात्पर तरं तत्वं सत्यानन्दं चिदात्मकम् ।
मनसा शिरसा नित्यं प्रणमामि रघूतमम् ॥५१
अशेष वेदात्मकमादि संज्ञमजं हरिं बिष्णुमनंत माद्यम् ।
अपारसंवित्सुखमेकरूपं परात्परं राममहंभजामि ॥५२
रामः सत्यं परंब्रह्म रामात्किंचिन्न बिद्यते ।
तस्माद्रामस्य रूपोयं सत्यं सत्य मिदं जगत् ॥५३

सनत्कुमार संहिता में श्रीव्यासजी का बचन युधिष्ठिरजी से है कि बिज्ञान के हेतु, बिमल बिस्तीर्ण नेत्र वाले, प्रज्ञान रूप, अपने सुख के एकही हेतु, आदि देव, परात्पर, हरि श्रीरामजी को मैं नित्य भजता हूँ ॥५०॥ परात्पर तर तत्व सत्यानन्द चिदात्मक श्रीरघूत्तमको मैं मन से शिरसे नित्य प्रणाम करता हूँ ॥५१॥ अशेष वेदों के आत्मा आदि संज्ञक, जन्म रहित, भक्त दुःख हारक सर्व व्यापक, अनंत, सबके आदि, अपार ज्ञान सुख वाले, सदा एक रूप परात्पर श्रीरामजी को मैं सदा भजता हूँ ॥५२॥ श्रीरामजीही सत्यरूप परब्रह्म हैं रामजी से पर कुछ भी नहीं है तिसी से श्रीराम रूप होने से यह जगत सत्य है सत्य है ॥५३॥

ब्रह्म संहियायाम् ।

पूर्णः पूर्णावतारश्च श्यामो रामो रघूद्वहः ।
अंशा नृसिंह कृष्णाद्या राघवोभगवान्स्वयम् ॥५४

ब्रह्म संहिता में लिखा है कि श्यामरूप रघूद्वह श्रीरामजी पूर्णावतार पूर्ण ब्रह्म हैं क्योंकि कृष्ण, नृसिंहादि अवतार अंश हैं श्रीराघव स्वयं भगवान हैं ॥५४॥ —***—

भुशुंडि रामायणे ब्रह्मणो वाक्यं नारदं प्रति ।

हर्षिता राधिका तत्र जानक्यंश समुद्भवा ।
रामस्यांश समुद्भूतः कृष्णो भवति द्वापरे ॥५५

भुशुण्डी रामायण में श्रीब्रह्माजी का बचन श्रीनारदजी से है कि श्रीजानकीजी के अंशसे श्रीराधिकाजी और श्रीरामजी के अंशसे समुद्भूत श्रीकृष्ण भगवान् द्वापर में होते हैं ॥५५॥

—***—

तुलसी कृते मनुवाक्यं ।

चौपाई----शंभु बिरंचि बिष्णु भगवाना ।
उपजहिं जासु अंश ते नाना ॥
सुनु सेवक सुरतरु सुर धेनू ।
बिधि हरिहर बंदित पद रेनू ॥
उपजहिं जासु अंश गुनखानी ।
अगनित लक्षि उमा ब्रह्मानी ॥
भृकुटि बिलास जासु जग होई ।
राम बाम दिसि सीता सोई ॥

--***—

कुम्भकरण वाक्यं रावणं प्रति ।

कीन्हें तैं बिरोध तेहि देवक ।
शिव बिरंचि हरि जाके सेवक ॥५६॥

हरि गीतिका छंद ।

धरु मन गुन प्रताप रघुबीर ॥ टेक ॥

स्वयं ब्रह्म सत चित अनन्द घन सुन्दर श्याम शरीर।
निर्गुन ब्रह्म परम पुरुषोत्ताम भजहिं महा मुनि धीर॥
कलाअंश निज बहु स्वरूप धरि होत अवनि अवतीर।
निज लीलाकरि मारि सकल खल हरत संतसुरपीर॥
अस्तुति कृति अवतार सबै बिधि बिष्णु शंभु हैं थीर।
सर्ब परे रघुबीर सुमूरति सकल श्रुतिन मत हीर॥
कला अंश आतम बिराट सोइ परमातमा गंभीर।
रामचरन श्रीरामचरण गहु पय तजि सब मतनीर॥५६

इति श्रीराम-नवरत्नसार संग्रहे श्रीरामरूप गुण प्रताप सूक्ष्म बर्णनं नाम द्वितीयं रत्नम् ।

—***—

सो०--सब बैकुंठ सचेत, गोपुर बिच साकेत सुभ।
ताके पर साकेत उभय अवध सांतःपुरी ॥१

अब श्रीकरुणासिन्धुजी महाराज इस तृतीय रत्नमें धाम बर्णन करते हुए सूक्ष्मतः एक सोरठा में तात्पर्य्य कहते हैं सब बैकुण्ठ अर्थात् भगवद्धाम सचेत हैं शुद्ध सत्वमयी विभूति है और वह सचेत है अर्थात् ज्ञान गुण युक्त है गोपुर अर्थात् गोलोक के बीच शुभ साकेत है क्योंकि साकेत गोलोक से पर है उभय अवध अर्थात् लीला विभूति गत अवध और पर बिभूति गत अवध ये दोनों बस्तुतः सब धामों में अंतःपुर सदृश अंतरंग जानना चाहिये यही धाम सबसे श्रेष्ठ है ॥१॥

तत्र प्रमाणं सदा शिव संहितायाम्
सौमित्रि वाक्यं वेदान्प्राति ।

महर्ल्लोकः क्षितेरूर्ध्वमेक कोटि प्रमाणतः ।
कोटि द्वये न बिख्यातो जनलोको व्यवास्थितः ॥२॥
चतुष्कोटि प्रमाणस्तु तपो लोको बिराजते ।
उपरिष्टात्ततः सत्यमष्ट कोटि प्रमाणतः ॥३॥
अतः प्रख्यातकौमारः कोटि षोड़श सम्भवः ।
तदूर्द्धोपरि संख्यात उमालोकः सुनिष्टितः ॥४॥
शिवलोकस्तदूर्ध्वंतु प्रकृत्या च समागतः ।
बिश्वस्य पुरतोबृत्तिः शिवस्य पुरतोवहिः ॥५॥
एतस्माद्वहिराबृत्तिः सप्तावरण संज्ञकः ।

तिसमें प्रमाण हैं सदा शिव संहिता में श्रीलक्ष्मणजी का बचन वेदों के प्रति । एक करोड़ योजन प्रमाण पृथ्वी से ऊपर महर्लोक है उसके ऊपर दो करोड़ योजन व्यवस्थित बिख्यात जनलोक है ॥२॥ उससे भी पर चार करोड़ योजन तपोलोक प्रकाशित है उसके ऊपर आठ करोड़ योजन पर सत्यलोक है ॥३॥ उसके ऊपर सोलह करोड़ योजन कुमार लोक है । उसके ऊपर बत्तिस करोड़ योजन उमालोक है ॥४॥ उसके ऊपर प्रकृति मंडलसे मिला हुआ शिवलोक है इस प्रकार विश्व के सीमाका प्रथम भाग शिवपुर से अर्थात् शिवलोक से बाहिर ॥५॥ इससे बाहिर रहने वाला सप्तावरण संज्ञक प्रकृति मंडल का आकार बिशेष है ॥

———

अन्यच्च ।

तदूर्ध्वं कोटि पंचाशत् क्रमाद्दश गुणात्परं ।
भूमिरापोनलो वायुः खमहं च त्रिधापरं ॥६॥

प्रकृतेर्महांश्च मूलेन सप्तावरण संज्ञकाः ॥७॥

और जगह भी लिखा है कि इस लोक रचनाओं के ऊपर पचास करोड़ योजन क्रमसे दश दश गुणोत्तर ॥६॥ पृथवी, जल, तेज, वायु, आकाश अहंकार, महत्तत्व ये प्रकृति के मूलसे सप्तावरण संज्ञक कहे जाते हैं ॥७॥

———

सदा शिव संहितायां च ।

तदूर्ध्वं सर्व सत्वानां कार्य्य कारण मानिनां ।
निलयं परमं दिव्यं महा बैष्णव संज्ञकम् ॥८॥
सहस्रमूर्द्धा विश्वात्मा सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
यन्निमेषा जगत्सर्वं लयीभूतं व्यवस्थितम् ॥९॥

तिसके ऊपर कार्य्य कारण के अभिमान रखने वाले सर्व जीवों का परम दिव्य निलय स्थान महाबैष्णव संज्ञक लोक है ॥८॥ जिसमें सहस्र मूर्द्धा सहस्र नेत्र सहस्रपद वाले बिश्वात्मा भगवान् बसते हैं जिनके निमेष से सब जगत् लयीभूत होकर व्यवस्थित होता है ॥९॥

उद्भवंति बिनश्यंति कालज्ञान बिडम्बनैः ।
यदंशेन समुद्भूता ब्रह्म बिष्णु महेश्वराः ॥१०॥
एतद्गुह्यं समास्थानं ददातु बांछितंहिनः ।
तदूर्ध्वंतु परंदिव्यं सत्य मन्याद्विवस्थितम् ॥११॥
न्यासिनां योगिनां स्थानं भगवद्भावनात्मनां ।
महाशंभुर्मोदतेत्र सर्व शक्ति समन्वितः ॥१२॥

जिस सहस्रशीर्षा भगवान् के निमेष उन्मेष समय में काल ज्ञान बिडम्बन के सहित सब लोक उत्पन्न होते हैं बिनाश होते हैं और जिन महा बिष्णु भगवान् के अंश से लोक कार्य्य निर्बाहक ब्रह्मा बिष्णु महेश्वर उत्पन्न होते हैं ॥१०॥ यह गुह्य स्थान हम सबों को बांछित फल देवै तिससे ऊपर भी एक दिव्यलोक अवस्थित है ॥११॥

जो सब कर्मों के त्यागने वाले भगवद्भावना मय बुद्धि वाले योगियों का स्थान है वहाँ ही सर्व शक्ति समन्वित श्रीमहाशंभु प्रमुदित निवास करते हैं ॥१२॥

तदूर्ध्वंतु परंकांतं महा बैकुण्ठ संज्ञकम् ।
बासुदेवादयस्तत्र बिहरंति स्वमायया ॥१३॥
तदूर्ध्वंतु स्वयंभाति गोलोकः प्रकृतेपरः ।
वाङ्मनोगोचरातीतो ज्योतिरूपः सनातनः॥१४

तिसके ऊपर परम प्रकाशमय महा बैकुण्ठ संज्ञक लोक है तिसी में बासुदेवादि चतुर्व्यूह अपनी शक्तियोंके सहित बिहार करते हैं ॥१३॥ तिसके ऊपर प्रकृति से पर बाङ्मनो गोचरातीत ज्योति स्वरूप सनातन गोलोक स्वयं शोभित हो रहा है ॥१४॥

तस्यमध्ये पुरंदिव्यं साकेतमितिसंज्ञकं ।
योषिद्रत्न मणिस्तंभप्रमदा गणसेवितम् ॥१५॥
तन्मध्ये परमोदारः कल्पवृक्षो बरप्रदः ।
तस्याधः परमंदिव्यं रत्नमंडप मुत्तमम् ॥१६॥
तन्मध्ये बेदिकारम्या स्वर्णरत्न विनिर्मिता ।
तन्मध्ये च परंशुभ्ररत्न सिंहासनं शुभम् ॥१७॥
सहस्रारं महापद्मं कर्णिकायुक्तमुन्नतं ।
तन्मध्येमुद्रिकाभिन्नं मुद्राद्वाभ्यांविभिन्नकम्॥१८

तिसके मध्य में साकेत संज्ञक दिव्यपुर है जो प्रकाशमयरत्न तथा मणिस्तंभोंसे शोभित है प्रमदा गणसे सेवित है ॥१५॥ तिसके मध्यमें परम उदार सर्व बरदाता कल्पबृक्ष है तिसके नीचे परम दिव्य उत्तम रत्न मंडप है ॥१६॥ तिसके बीचमें सुबर्ण तथा नाना रत्नों से बिनिर्मित रमणीय वेदिका है तिसके मध्यमें अति प्रकाशमय शुभरत्न सिंहासन है ॥१७॥ तिसमें हजार दलका कमल है वह उन्नत कर्णिका से युक्त है उस कर्णिका में एक मुद्रा तथा दो मुद्रा हैं ॥१८॥

वह्नीन्दु मंडले नापि वेष्टितं बिन्दुभूषितम् ।
चन्द्रकोटि प्रतीकाशं छत्रकं च सचामरं ॥१९॥
सदामृत घनश्रावि मुक्तादाम बितानकं ।
तन्मध्ये जानकी देबी सर्बशक्ति नमस्कृता ॥२०॥
तत्रास्ते भगवान् रामः सर्बदेवशिरोमणिः ।
तत्रादौ चिन्तयेत्तेजो वह्निरूपं सुशक्तिकम् ॥२१

पहली सूर्य्यमुद्रा है बाद अग्नि और इन्दु मंडल मुद्रा है इन मुद्रावों से वह पद्म वेष्टित है तथा सर्ब कारण रूप बिन्दु से भूषित है कोटि चन्द्रमा के समान छत्र तथा चामर से वह सिंहासन शोभित है ॥१९॥ एवं अमृत बिंदुओं के श्रावण करने वाले मोतियों के माला युक्त बितान से शोभित है तिसके मध्यमें सर्वं शक्तियों से नमस्कृत श्रीजानकी देबी बिराजी हैं ॥२०॥ तहां पर सर्ब देव शिरोमणि ज्ञान शक्त्यादि षड्गुण बिशिष्ट श्रीराम भगवान् बिराजते हैं तिसमें पहले तेजमय अग्नि रूप सर्व शक्ति युक्त चिन्तवन करै ॥२१॥

तेजसामहाताश्लिष्ट मानंदैकाग्रमंदिरम् ।
एकाग्रमनसा पश्येत्तत्रदेवं सुविग्रहम् ॥२२॥
स्निग्ध मिन्दीवरश्यामं कोटीन्दु ललित द्युतिं ।
चिद्रूपं परमोदारं बीरभद्रं रघूद्वहम् ॥२३॥
द्विभुजं मधुरंशांतं जानकी प्रेम विह्वलं ।
दोर्दंडचंडकोदंडं शरच्चन्द्रं महाभुजम् ॥२४॥
सीतालिंगितबामांकं कामरूपं रसोत्सुकं ।
तरुणारुण संकाशं बिकचांम्बुज पादकं ॥२५॥

जो महान् तेजसे श्लिष्ट हैं अर्थात् युक्त हैं आनन्द के एकाग्र वाले मंदिरमें इस प्रकार सुन्दर विग्रहवान् सर्ब प्रकाशक देव श्रीरामजी को

एकाग्र मन होकर देखै अर्थात् ध्यान करै ॥२२॥ चिक्कन नील कमल सम श्याम, कोटि चन्द्र समान ललित द्युति वाले, चिद्रूप परमोदार, बीर शिरोमणि, कल्याण रूप श्रीरघूद्वह ॥२३॥ को द्विभुज, मधुर, शांत श्रीजनकात्मजा जू के प्रेम से विह्वल ध्यान करै भुज दंडमें प्रचंड को दंड को धारण किये शरद कालीन चन्द्रसम सुखद महाभुज ॥२४॥ बामांक में श्रीविदेह राज कुमारी जू को आलिगन किये काम सम सुन्दर रूप रसमें उत्सुक तरुण सूर्य्य के समान प्रकाशमय खिले हुए कमल के समान चरणार्बिन्द वाले ॥२५॥

नखचन्द्रं पदद्वंद्वं प्रिय तेजः समावृतम् ।
कूर्मपृष्ठ पदाभासं रणन्मंजीर पादकम् ॥२६॥
कटि सूत्रांकितं श्रीशं यज्ञ सूत्रै रलंकृतम् ।
रत्नकंकण केयूर शोभिताग्र भुज द्वयम् ॥२७॥
चन्द्रकोटि प्रतीकाश कौस्तुभेन बिराजितम् ।
दिव्यरत्न समायुक्त मुद्रिकाभिरलं कृतम् ॥२८॥
नासिकांशैक भागे न मुक्ताफलस्फुरन्मुखम् ।
सूर्य्यकोटि प्रतीकाश कुंडलाढ्य श्रुतिद्वयम् ॥२९
प्रवृत्तारुण संकाश किरीटेन बिराजितम् ।
गोबिन्दं गोबिदां श्रेष्ठं चिन्मयानन्द बिग्रहम् ॥३०

नख चन्द्रों से प्रकाशित हैं दोनों पद जिनके अतएव तेजसे समावृत होंने पर भी प्रिय हैं कूर्म के पृष्ठ के समान जो पद उसके आभास से युक्त हैं शब्दाय मान नूपुर युक्त चरण कमल हैं जिनके ॥२६॥ कटि सूत्र से अङ्कित यज्ञ सूत्र से अलंकृत समस्त श्री के स्वामी हैं रत्न रचित कंकण, के यूर से शोभित अग्रभुज द्वय हैं जिनके ॥२७॥ कोटि चन्द्रमा के प्रकाश वाले कौस्तुभमणि से बिराजित हैं दिव्यरत्नों से युक्त और मुद्रिका से अलंकृत हैं ॥२८॥ नासिका के अंशके एक भागमें मुक्ता फल से प्रकाशित है मुख जिनका कोटि सूर्य्य प्रकाश वाले कुण्डलों से युक्त दोनों श्रवण हैं जिनके ॥२९॥ उदय होते हुए सूर्य्य के समान प्रकाश

वाले किरीट से बिराजित हैं इन्द्रियों के प्रकाश करने वाले और इन्द्रिय प्रकाशक सर्व देवों में श्रेष्ठ चिन्मय आनन्द बिग्रह है जिनका ॥३०॥

दिव्यायुध सुसंम्पन्नं दिव्याभरणभूषितम् ।
अक्षरं केवलं ब्रह्म पीतकौशेय बाससम् ॥३१॥
शंख चक्र गदापद्म चर्मासि हल मूसलैः ।
तद्रूपैर्विविधा कारैः सेव्यमानं परात्परम् ॥३२॥
बशिष्ठबामदेवादि मुनिभिः परिसेवितम् ।
लक्ष्मणं पश्चिमे भागे धृत छत्रं स चामरम् ॥३३॥
उभौ भरत शत्रुघ्नौ ताल वृन्त कराम्बुजौ ।
अग्रेऽव्यग्रं हनूमंतं वाचयंतं सुपुस्तकम् ॥३४॥

दिव्य आयुध से संपन्न दिव्य आभरणों से भूषित अक्षर ब्रह्म केवल श्रुति प्रतिपाद्य पीत कौशेय बस्त्र को धारण किये ॥३१॥ शंख, चक्र, गदा, पद्म, ढाल, तरवार, हल, मूसल इत्यादि तद्रूप और भी विविधि प्रकार के आकार वाले आयुधों से सेव्यमान पर से भी पर ॥३२॥ बशिष्ठ बामदेवादि मुनियों से परिसेवित चवँर छत्रको धारण किये हुए लक्ष्मणजी से पश्चिम भागमें परिसेवित ॥३३॥ ताल वृन्त (व्यजन) को हाथमें लिये पार्श्व भागमें श्रीभरत, शत्रुहन, से सेवित अग्र भागमें सावधान सुपुस्तक बांचते हुए श्रीहनुमानजी को ध्यान करै ॥३४

भानु कोटि प्रतीकाशं चन्द्रकोटि प्रमोदकम् ।
इन्द्र कोटि सदा मोदं बसु कोटि बसुप्रदम् ॥३५॥
बिष्णुकोटि प्रतीपालं ब्रह्मकोटि बिसर्जनम् ।
रुद्र कोटि प्रमर्दवै मातृ कोटि बिनाशनम् ॥३६॥
कोटि भैरव संहारं मृत्यु कोटि विभक्षकम् ।
यमकोटि दुराधर्षं काल कोटि प्रधावकम् ॥३७॥

गन्धर्व कोटि संगीतं गण कोटि गणेश्वरम् ।
कामकोटि कलानाथं दुर्गाकोटि विमोहनम् ॥३८॥
सर्व सौभाग्य निलयं सर्वानन्दैक दायकम् ।
कौशल्यानन्दनं रामं केवलं भव खण्डनम् ॥३९॥

कोटि भानु के समान प्रकाश करने वाले कोटि चन्द्र समान प्रमोद देने वाले इन्द्र कोटि सम आनन्द ऐवर्य्य वाले कोटि धनद के समान धनप्रद ॥३५॥ कोटि बिष्णु समान पालन कर्त्ता कोटि ब्रह्मा समान जगतस्रष्टा कोटि रुद्र समान संहारकर्ता कोटि मातृ गण समान शत्रु बिनाशक ॥३६॥ कोटि भैरव समान संहार कर्ता कोटि मृत्यु के समान बिश्व भक्षक कोटि यमराज सम दुर्द्धर्ष कोटि काल समान सबके संचालक ॥३७॥ कोटि गन्धर्व समान गीत निपुण कोटि गणेश्वर समान गणों के अधिप कोटि काम समान कलाओं में प्रबीण कोटि दुर्गा समान बिश्व बिमोहक ॥३८॥ सर्व सौभाग्य का स्थान सर्व आनन्दों के एक दाता श्रीकौशल्यानन्दन केवल एक मात्र संसार के खंडन करने वाले श्रीरामजी का ध्यान करै ॥३९॥

अन्यस्मिन् चा ध्याये सौमित्रि वाक्यं वेदान्प्रति ।
सगुणं निर्गुणं चैव परमात्मा तथैव च ।
एतच्चांशाहि रामस्य पूर्वे चान्ते च मध्यतः ॥४०
आदि ज्योतिर्महाशंभु रात्मपूर्णेन चाक्षरम् ।
तत्परो बासुदेवःस्यात् स्वयं ब्रह्म निरक्षरम् ॥४१
राघवस्य गुणोदिव्यो महाबिष्णुः स्वरूपवान् ।
बासुदेवो घनीभूतस्तनु तेजो महाशिवः ॥४२॥

सगुण निर्गुण तथा परमात्मा ये यदि श्रीरामजी से भिन्न कोई कहे तो ये सब आदि मध्य अन्तकाल में श्रीरामजी के अंशही हैं ॥४०॥

प्रथम आदि ज्योति महाशंभु तथा पूर्ण जो आत्मा तथा अक्षर इन सबसे पर बासुदेव हैं जो स्वयं निरक्षर ब्रह्म हैं ॥४१॥ उनसे भी पर श्रीरामजी के दिव्य गुण स्वरूपवान महाबिष्णु हैं घनीभूत तेज बासुदेव हैं और सूक्ष्म तेज महा शिव हैं ॥४२॥

—***—

अन्यच्च ।

ब्रह्मैवात्मामनश्चैव देहश्च प्रकृतिस्तथा ।
घनीभूतं हरेस्तेजो ब्रह्मेति परि कथ्यते ॥४३॥

ब्रह्म ही आत्मा है मन और देह प्रकृति है और हरि अर्थात् श्रीरामजी का जो घनी भूत तेज है वही सर्वत्र व्याप्त ब्रह्म कहा जाता है ॥४३॥

———

द्वितीये चाध्याये महासुन्दरी तंत्रे ।

सृष्टिरग्रे परे धाम्नि संबादः समभूत्त किल ।
महाशंभुर्महाबिष्णुर्महामायेरिता पुनः ॥४४॥
महाशंभुर्महामाया महाबिष्णुश्च सक्रियः ।
कालेन समनुप्राप्त राघवंपरि चिन्तयन् ॥४५॥

महा सुन्दरी तंत्र के द्वितीय अध्याय में लिखा है कि सृष्टि के पहले पर धाम में संबाद भया उसमें महाशंभु महा बिष्णु महा माया इनका बर्णन किया गया ॥४४॥ उसमें महाशंभु वा महामाया तथा क्रिया सहित महाबिष्णुजी ने भी समय प्राप्त होने पर श्रीराघवजी का चिन्तमन किया ॥४५॥

—***—

महाशंभु बाक्यं महाबिष्णुं प्रति ।

शृणु तात प्रवक्ष्यामि रामादद्भुत कर्मणः ।
अखंड ब्रह्मणोनित्याद्राघवान्नित्यविग्रहात् ॥४६
चिदानन्दात्परानन्दात्साकेत नगराधिपात् ।
सीतायाः परदेव्याश्चलीलामात्रमिदंजगत् ॥४७

महाविष्णु भगवान् से महाशंभु का बचन है कि हे तात सुनिये हम कहते हैं अखंड ब्रह्म नित्य, नित्य बिग्रह ॥४६॥ चिदानन्द परानन्द साकेत नगराधिपति अद्भुत कर्मा श्रीराघव रामजी से तथा परात्परा देवी श्रीजनकात्मजाजी से यह जगत लीला मात्र है अर्थात् यह जगत श्रीसीतारामजी की लीला है ॥४७॥

इन्द्रनील मणि स्निग्धोरुचिराकृतिरव्ययः ।
द्विभुजावयवोदक्षः शरकोदंड मण्डितः ॥४८॥
इतिरामस्तु विग्रहवान् परं ब्रह्माभिधीयते ।
भुक्ति मुक्ति प्रसादार्थे साधकानां पुनः पुनः ॥४६॥

इन्द्र नीलमणि के समान स्निग्ध अर्थात् चिक्कन, रुचिर आकृति, अव्यय द्विभुज, सुन्दराबैव, परम प्रबीण, धनुष बाण से मंडित ॥४८॥ इस प्रकार बिग्रहवान परब्रह्म श्रीरामजी महर्षियों से कथित हैं साधकों के भुक्ति मुक्ति प्रसादार्थ अवतार लेते हैं ॥४९॥

एवं ज्ञेया परानित्या सीता ब्रह्म सुबिग्रहा ।
सर्ब शक्ति मयीधात्री सर्ब शक्ति परा तथा ॥५०॥
अनेका वयवैर्भिन्ना नित्य लीला सुविग्रहा ।
अनुग्रहार्थ मस्माक मेकं ब्रह्म द्विधागतम् ॥५१॥
रामः सीता जानकी रामचन्द्रो नाहुर्भेदंह्येतयो रस्तिकश्चित् । संतोमत्वा तत्वमेतद्विबुध्वापारं याताः संसृतेर्मृत्युकाल्लात् ॥५२॥

इसी प्रकार नित्या, परा, ब्रह्म बिग्रह रूपा श्रीजानकीजी को भी जानो सर्व शक्ति मयी सबके धारण करने वाली अर्थात् सबमें अपनी सत्ता देने वाली सर्ब शक्तियों से परा ॥५०॥ अनेक अवयव से भिन्न २ रूप धारण करने वाली नित्य लीला में नित्य सुन्दर विग्रह से बिराजती हैं ॥५१॥ श्रीरामजी जानकीजी हैं और श्रीजानकीजी रामजी हैं इन दोनों में कोई भेद नहीं है संत लोग इस प्रकार मानकर इस तत्वको

जानकर संसृति मृत्युकाल से पार चले गये अर्थात् इन दोनों के ऐक्य ज्ञान से संसार से तर कर परम पद को प्राप्त भये ॥५२॥

ब्रह्मांडानामसंख्यानां ब्रह्म बिष्णु हरात्मनाम् ।
उद्भवे प्रलये हेतुः राम एव इति श्रुतिः ॥५३॥
सृष्टिस्थित्यंत करणे ब्रह्म बिष्णु महेश्वराः ।
यस्यायुतायुतां शांशास्तदब्रह्मेत्यभिधीयते ॥५४॥
सहस्त्र कोटयः संति ब्रह्मांडास्तिर्यगूर्ध्वगाः ।
ब्रह्माणो हरयो रुद्रास्तत्र तत्र विवस्थिताः ॥५५॥

ब्रह्मा, बिष्णु, शिव विद्यमान हैं जिनमें ऐसे असंख्य ब्रह्मांडों के उत्पत्ति प्रलय के कारण श्रीरामजी हैं ऐसी श्रुति है ॥५३॥ सृष्टि, पालन संहार करने में प्रवृत्त जो ब्रह्मा, बिष्णु महेश्वर हैं वे सब जिसके अयुत अयुत अंश के अंश हैं वह ब्रह्म कहा जाता है ॥५४॥ ऊपर नीचे जो हजार हों करोड़ हों ब्रह्मांड हैं उन सबों में ब्रह्मा श्रीहरि रुद्र व्यवस्थित हैं ॥५५॥

अजादि देव देवस्य श्रीरामस्य महात्मनः ।
अवतारा बहवः संति कलाश्चांश बिभूतयः ॥५६
अवतारैरसंख्यातैः प्रधानैरभितस्तथा ।
सेव्यमानः परे रम्ये गुणाबासे परं पदे ॥५७॥

ब्रह्मादि देवों के भी देव महात्मा श्रीरामजी के कला अंश बिभूति रूप बहुत से अवतार हैं ॥५६॥ उन प्रधान असंख्यात अवतारों से सर्व ओर से सर्व गुण के निवास परम रम्य परम पद में श्रीरामजी सेव्यमान हैं ॥५७॥

———

महा सुन्दरी तंत्रे श्रीजनक उवाच ।

कस्मिन्पीठे महादेबि नित्यं रामः प्रतिष्ठितः ।
पूर्णानन्दो घनश्यामो माया गुण बिडम्बकः ॥५८

महा सुन्दरी तंत्र में श्रीविदेह राजका प्रश्न है कि हे महादेवि पूर्णानन्द घनश्याम माया गुण बिडम्बका अर्थात् अपने में सब माया गुण को दिखाने वाले श्रीरामजी किस पीठ में किस स्थान में नित्य प्रतिष्ठित हैं ॥५८॥

———

श्रीजानक्युवाच ।

गोलोक संज्ञकेनित्य साकेत भवनोत्तमे ।
भ्रातृभिरनुजैर्भाति देव देवः सनातनः ॥५६॥
स्वप्रकाशोनित्यरूपो रामोमायो दयात्मवान् ।
इन्द्रनीलमणि स्निग्धश्यामसुन्दर विग्रहः ॥६०॥

श्रीविदेह महाराज के प्रश्न को सुनकर श्रीजानकीजी का बचन है कि गोलोक संज्ञक नित्य धाममें साकेत संज्ञक उत्तम भवन में अपने अनुज भ्राताओं के सहित सनातन देवों के भी देव ॥५९॥ देव स्वप्रकाश नित्य रूप माया का उदय है जिसमें इस प्रकार के आत्मा वाले इन्द्र नीलमणि समान स्निग्ध श्याम सुन्दर बिग्रह श्रीरामजी बिराजते हैं॥६०

—***—

भार्गव पुराणे नारायण वाक्यं नरं प्रति ।

इममेवपुरा प्रश्नो बैकुण्ठ नगरे हरिं ।
सर्वेश्वरी जगन्माता पप्रच्छ कमलालया ॥६१॥
त्रिपाद्विभूतौ बैकुण्ठे बिरजायाः परे तटे ।
या देवानां पूरयोध्याह्यमृतेना वृतापुरी ॥६२॥

भार्गव पुराण में श्रीनारायण भगवान का बचन नरके प्रति है कि बैकुण्ठ नगर में श्रीहरि से जगन्माता सर्वेश्वरी कमलालया लक्ष्मीजी ने यही प्रश्न पहले किया था कि श्रीरामजी का धाम कौन सा है॥६१॥ भगवान ने उत्तर दिया कि त्रिपाद्विभूति नित्य बैकुण्ठ में बिरजा के पर तटमें देवतों की अर्थात् नित्य जीवों की अमृत पद बाच्य मोक्ष आवरण से युक्त अयोध्यापुरी है ॥६२॥

श्रीमन्महारामायणे शंकर वाक्यं पार्वतीं प्रति ।
गोलोकाच्च परंज्ञेयं साकेतान्तः पुरं प्रिये ।
गोप्याद्गोप्य तरागोप्यासायोध्यातीवदुर्लभा ॥६३
पुंसामगोचरं स्थानं सखिदास विवर्जितं ।
महापुरुष रूपेण श्रीरामोहि बिराजिते ॥६४॥
अनंताभिः सखीभिश्च सार्द्धरामः स सीतया ।
स्वेच्छया कुरुतेरासं ताः कुजागात्र संभवाः ॥६५

महा रामायण में श्रीशंकरजी का बचन श्रीपार्वतीजी से है कि हे प्रिये गोलोक से पर साकेत धाम श्रीरामजी का अन्तःपुर है वही अतीव दुर्लभा गोप्य से भी गोप्यतर श्रीअयोध्या जानो ॥६३॥ वह स्थान पुरुष अगोचर है सखा दासों से बर्जित है केवल महापुरुष रूप श्रीरामजी बिराजते हैं ॥६४॥ अनंत सखियों से युक्त श्रीजनकात्मजाजी के सहित अपनी इच्छा से रास करते हैं और वे सब सखी भूमिजा श्रीजानकीजी के अन्शसे उत्पन्न हैं ॥६५॥

सर्बाभरण संपन्नो रत्नौघैर्विविधैर्वरैः ।
मध्योवयः किशोरश्चानंत रूपो रघूत्तमः ॥६६॥
किशोर्य्यः सकलासख्यो भूषिताश्चन्द्रिकादिभिः ।
जानकीरामरूपास्ता महाह्लादाभि संयुताः ॥६७
श्रृणष्वशुभगेमत्तो बिस्तरेण कथांपरां ।
राम रास समाविष्टां प्रवक्ष्ये त्वद्धितायवै ॥६८॥

विविधि प्रकार श्रेष्ठ रत्नों से निर्मित सर्बाभरण संपन्न हैं तथा मध्य किशोर अवस्था है अनन्त रूप श्रीरघूत्तम वहां बिहार करते हैं ॥६६॥ सखी सब किशोरावस्था संपन्न चन्द्रिकादि भूषणों से भूषित हैं महाह्लाद से संयुक्त श्रीसीतारामजी के रूपही सब हैं ॥६७॥ हे शुभगे हमसे और भी बिस्तार सहित श्रीरामजी के रासलीला से समाविष्ट कथां को सुनो जो तुम्हारे हितके लिये मैं कहूँगा ॥६८॥

हनुमत्संहितायां श्रीहनुद्वाक्यं अगस्त्यं प्रति ।

पुंसामगोचरंस्थानं केवलं प्रेम दायकं ।
नारी भाव समायुक्तास्तेषां दृश्यं भवेद्ध्रुवम् ॥६९

गोलोक साकेत समावुभौमुने कदापि भेदो नहि राघवस्य। उभौतु बिश्रामनिवासधामनीपरस्परंवा-सदृशौविलासात् ॥७०॥

हनुमत्संहिता में श्रीहनुमानजी का बचन श्रीअगस्त्यजी से है कि वह श्रीरामजी का अन्तःपुर साकेत धाम पुरुषों को अगोचर स्थान है केवल प्रेमदायक है जो नारी भाव समायुक्त हैं तिन्हीं को वह निश्चय रूप से दृश्य होता है ॥६९॥ हे मुने गोलोक साकेत दोनों समानहीं है क्योंकि श्रीरामजी को उनमें कदापि भेद नहीं है वे दोनों निवास बिश्राम धाम हैं और बिलास से परस्पर सदृश हैं पर साकेत अन्तःपुर सदृश है इतनाही भेद है ॥७०॥

—***—

हिरण्यगर्भ संहितायां अगस्त्य वाक्यं सुतीक्ष्णं प्रति ।

अद्वैतानन्द चैतन्यं शुद्धसत्वैक लक्षणम् ।
वहिरन्तः सुतीक्ष्णात्र रामचन्द्रः प्रकाशते ॥७१

हिरण्य गर्भ संहिता में श्रीअगस्त्यजी का बचन सुतीक्ष्णजी से है कि हे सुतीक्ष्ण अद्वैत आनन्द चैतन्य शुद्ध सत्वैक लक्षण श्रीरामचन्द्र जू महाराज सबके भीतर बाहर इस ब्रह्मांड में प्रकाशित हो रहे हैं ॥७१॥

—***—

श्रीराम गीतायां श्रीरामचन्द्र वाक्यं बशिष्ठं प्रति ।

यथा सर्वेषु कुंभेषु रबिरेकोपिदृश्यते ।
तथासर्बेषु भूतेषु चिंतनीयोस्म्यहं सदा ॥७२॥

श्रीराम गीता में श्रीरामजी का बचन श्रीबशिष्ठजी से है कि जैसे अनेक घटों में एक ही सूर्य्य सबमें देख पड़ते हैं तैसे ही सर्ब

भूतों में मैं सदा चिंतनीय हूँ ॥७२॥

कश्यपस्मृतौ कश्यप वाक्यं श्रीरामं प्रति।
अवताराश्च ये तात त्वत्तः सर्वे भवंति ते ।
उदयाद्रेरिव प्राच्या मादित्यानां युगे युगे ॥७३॥

कश्यप स्मृति के उत्तरार्द्ध में कश्यपजी का बचन श्रीरामजी से है कि हे तात जितने अवतार हैं वे सब आपही से होते हैं जैसे प्राची-दिशा में उदयाचल से ही युग युग में आदित्यों का उदय होता है यहां पर आदित्यानां यह पूज्यत्व से बहु बचन है अथवा पुराणों की शैली से महीना महीना में भिन्न आदित्य उदय होते हैं इसांसे आदित्यानां कहा ॥७३॥

—***—

अथर्वण उत्तरार्द्धे ।

यायोध्यापुरी सा सर्व बैकुण्ठाना मेव मूला धारा प्रकृतेः परा तत्सद्ब्रह्म मयाबिरजोत्तरादिव्यरत्न-कोशाढ्या तस्यां नित्य मेव सीतारामयोर्बिहारस्थल-मस्तीति ॥७४॥

अथर्वण के उत्तरार्द्ध रहस्य में यह बाक्य है जो श्रीअयोध्यापुरी है वह सर्व बैकुण्ठों की मूलाधारा है और मूल प्रकृति से परा है तत् सद्ब्रह्ममयी है बिरजा से उत्तर है दिव्य रत्नमय कोशों से युक्त है तिसमें श्रीसीतारामजी का नित्य बिहार स्थल है ॥७४॥

—***—

सामवेदेतैत्तरीय श्रुतिः ।

या देवानांपूर योध्यातस्यां हिरणमयः कोशः स्वर्गोलोको ज्योति सा ब्रतः योवैतां ब्रह्मणोवेदो-मृतेना वृतांपुरीं तस्मै ब्रह्म च ब्रह्मा च आयुः कीर्ति-प्रजां ददुरिति ॥७५॥

सामवेद में तैत्तरीय की श्रुति है कि देवों की अर्थात् दिव्य ज्ञान संपन्न नित्य मुक्त तथा मुक्त जीवों की पुरी है उसका नाम श्रीअयोध्या है तिसमें हिरणमय कोश है समस्त स्वर्गलोक अर्थात् त्रिपाद्विभूति इसीके ज्योति से अच्छादित है अमृत अर्थात् मोक्ष से आवृत ब्रह्म की तिस पुरी को जो जानता है उस ज्ञानी पुरुष को ब्रह्म अर्थात् परब्रह्म ब्रह्मा हिरण्य गर्भ आयु कीर्ति प्रजा को देते हैं ॥७५॥

—***—

तुलसी कृते श्रीरामचन्द्र वाक्यं सुग्रीवादि प्रति ।

चौपाईः—यद्यपि सब बैकुंठ बखाना ।
वेद पुराण विदित जग जाना ॥
अवध सरिस प्रिय मोहि न सोऊ ।
यह प्रसंग जानै कोउ कोऊ ॥७६॥

—***—

गीतिका छन्द ।

चित्त बसु रामरूप पर धाम ॥ टेक ॥
बैकुण्ठ पर गोलोक पर श्रीअवधपुर अभिराम ।
मध्यस्थता के कल्पतरु मंडप रतन तेहि ठाम ॥
मंडप तरे मणि वेदिका मणि मय सिंहासन ताम ।
तापर सहसदल कंज मुद्रा अगिनि शशि जुगयाम ॥
आसीन तापर जानकी श्रीराम जू के बाम ।
श्रीराम कर धनुबान वर सिय पानि पंकज श्याम ॥
अतिरूपद्युतिनहिंजात कहि घननील कोटिन्हदाम ।
भूषण लसत प्रतिअंग देखि लजाहिं बहु रति काम ॥

श्रीसर्व मुनि जन सखा सब अवतार शक्ति प्रणाम।
श्रीरामचरण समस्त सेवहिं रहहिं रुख लखिराम॥

इति श्रीराम-नवरत्न सार संग्रहे पर रूप धाम सूक्ष्म वर्णनं तृतीयं रत्नम् ।

---

* दोहा *

धनुष बान असि चक्र दर गदा पद्म हल आदि।
धनुष बान बर मोक्ष प्रद आयुध सकल अनादि॥१

धनुष, बान, चक्र, शंख, गदा, पद्म, हल आदिक भगवान के अनेक आयुध हैं सब मोक्षप्रद हैं सब अनादि हैं परंच धनुषबान यह आयुध सब आयुधों में श्रेष्ठ हैं यह इस चतुर्थ रत्न में दिखलाया जायगा ॥१॥

यजुर्वेदे उत्तरार्द्धे एकोनत्रिंशत्तमेऽध्याये एकोन चत्वारिंशत्तमो मंत्रः ।

धन्वना गा धन्वना जिंजयेम धन्वना तीव्राः समदो जयेम । धनुः शत्रोरपकामं कृणोति धन्वना सर्वाः प्रदिशो जयेम ॥

अस्य मंत्रस्यार्थः । धन्वना, धनुषा अंकिता इति शेषः अतस्तीव्राः पटवः परब्रह्म प्राप्ति प्रति बंधकी भूत पाप निरसने समर्थावयं समदः कामादिभिरनुष्ठितान् संग्रामान् जयेम । नन्विन्द्रियाणां विषयोन्मुख्ये कथं कामादि जयः इत्याकांक्षायामुच्यते

धन्वना धनुषा तदंकन प्रभावेणैवगाः इन्द्रियाणि जयेम इन्द्रिय जये न च प्रसंख्यानाख्यावस्थालाभे धन्वना आजिं अजंति गच्छंति परब्रह्मगंतारो अस्मिन्निति आजिमार्गः तंजयेम धनुरंकनप्रसन्नेश्वर प्रदर्शितया सुषुम्नयानाड्या वहिर्निस्क्रम्य अर्चिरादिमार्गेण परब्रह्म गच्छेमइत्यर्थः नन्वनिर्लून मायान्वयस्य कथमीश्वर प्रसत्तिरित्या शंक्याह धनुः कर्तृ शत्रुभूत मनादिमाया संवधस्यसंसार पातनौन्मुख्यं अप कृणोति अपनयति नाशयति यद्वातस्यमनोरथाभावं सम्पादयति ननु सत्सुसंचितादि कर्मसु कथं मायासबंधस्य संसारपातनौर्मुख्य बिनाशइत्याह धन्वना धनुषा सर्बाः प्रदिशः सर्बदिग्वर्ति नानायोनि जन्मप्रदान समर्थानि सर्बाणिकर्माणि जयेम नाशयाम इत्यर्थः ॥

श्रीरामजी के धनुष बाण के धारण का प्रभाव इस श्रुति में दिखलाया है धन्वना अङ्किता अर्थात् हम श्रीरामजी के धनुष बान से अङ्कित होंगे तो परम समर्थ होकर अर्थात् श्रीराम परब्रह्म के प्राप्ति में प्रति बंधकी भूत जो पाप उन सबों के निरास करने में समर्थ होकर समदः अर्थात् कामादिकों से किये हुए संग्रामों को जयेम जीतेंगे न कहो इन्द्रियां जब बिषय के उन्मुख हो रही हैं तब कामादि का जय कैसे कर सकोगे इस आकांक्षा में कहते हैं कि धन्वनागाः जयेम अर्थात् धनुष के अङ्कन प्रभाव से इन्द्रियों को जीत लेंगे पुनः इन्द्रियों के जय करने पर प्रसंख्यानाख्य अवस्था के लाभ होने से धन्वना आजिं जयेम धनुष के प्रभाव से परब्रह्म के प्राप्ति के प्रभाव से परब्रह्म के प्राप्ति के करने वाले चलैं जिसमें उसको कहीं आजि अर्थात् मार्ग रास्ता

तिसको जीतैंगे अर्थात् धनुष बान के अङ्कन से प्रसन्न जो ईश्वर तिनकी दिखलाई हुई जो सुषुम्ना नाड़ी उसके द्वारा शरीर से बाहर निकल कर परब्रह्म को प्राप्त होंगे न कहो माया सम्बन्ध के छेदन हुए बिना ईश्वर की प्रसन्नता कैसे होगी यह शंका करके कहते हैं कि धनुष जो है वह शत्रु भूत अनादि माया सम्बन्ध के संसार के डारने के मनोरथ को बिनाश करैगा अथवा माया संबंध को संसार में डारने का मनोरथ ही न होने देगा न कहो संचितादि कर्म रहने पर माया संबंध को संसार में डारने का मनोरथ क्यों न होगा उस पर कहते हैं कि धन्वना सर्बाः प्रदिशः जयेम धनुष बाण के धारण करने से सर्व दिशाओं में वर्तमान जो नाना योनि उनमें जन्म देने को समर्थ जो सब कर्म उनको जीत लेंगे अर्थात् नाश कर देंगे यह श्रुति का अर्थ है। यजुर्वेद उत्तरार्ध अध्याय २९, मंत्र ३९ में यह लिखा है।

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायणे किष्किंधा कांडे।

तदस्त्रं तस्य बीरस्य स्वर्गमार्ग प्रभावनम्।
रामबाणा सनाक्षिप्तमावहत्परमांगतिम् ॥३

श्रीवाल्मीकीय रामायण किष्किंधा कांड में लिखा है वह अस्त्र तिस बानर राज बीर बालि के स्वर्ग (परंपद) मार्ग का देने वाला हुआ क्योंकि श्रीरामजी के धनुष से निकला हुआ बाण परमागति नित्य राम धाम प्राप्ति रूपा उत्तमा गतिको निश्चय देता ही है तात्पर्य्य यह है कि श्रीरघुनाथजी के बाण सब श्रीराम नाम से अङ्कित (युक्त) रहते हैं इसीसे इनके स्पर्श से सब जीव मोक्षाधिकारी होते हैं यह भी श्रीवाल्मीकीय रामायण युद्ध कांड में लिखा है राक्षसों ने रावण से कहा है रामानामांकित्तैः शरैः हम लोग युद्ध कर आपके पास राम-नामांकित बाणों से अपने शरीरों को बिदीर्ण कर आवैंगे तस्मात् व्यंग-बृत्ति से महर्षि श्रीवाल्मीकजी ने यह स्पष्ट सूचित किया मोक्ष कामना वाले बिशुद्धान्तःकरण पुरुषों को श्रीरामायुध धनुर्बाण से अङ्कित अवश्य होना चाहिए ॥३॥

योवैनित्यं धनुर्वाणांकितोभवति सपाप्मानं तरति स संसारं तरति स भगवदाश्रितो भवति स भगवद्रूपो भवतीति श्रुतिः ॥४॥

जो नित्य धनुर्बाण से अङ्कित होता है वह सब पापों से तर जाता है वह संसार से तर जाता है वह भगवदाश्रित होता है वह भगवान का रूप होता है इस प्रकार प्रमाण है ॥४॥

अगस्त्य संहितायां अगस्त्य वाक्यं सुतीक्ष्णं प्रति।

बामे करे धनुः कुर्य्याद्दक्षिणे बाणमेव च।
सबिन्दुंतिलकं कुर्य्यान् मुक्ति भागी भवेन्नरः ॥५
उभाभ्यामपिरेखाभ्यांतिलकः परिकथ्यते।
हरिपादस्थितं बिन्दुं पीतं च परिधार्य्यते ॥६॥
तिलकं रामरूपेण बिन्दुरूपेण भूमिजां।
धृत्वा च राम भक्ताना मग्रगण्यो गुणाग्रणीः ॥७॥
भ्रुवोन्तादपि चारभ्य ललाटान्ते च धारयेत्।
मनोहरं तथा मध्ये अन्तरं युग्म मंगुलम् ॥८॥

श्रीअगस्त्य संहिता में श्रीअगस्त्यजी का बचन श्रीसुतीक्ष्णजी से है कि बायें हाथ में धनुष दक्षिण हाथ में बाण के चिन्ह को धारण करै बिन्दु के सहित जो तिलक करता है वह मुक्ति भागी होता है ॥५॥ दोनों रेखावों से युक्त तिलक कहा जाता है श्रीहरिपद में स्थित जो बिन्दु वह पीतरंग से तिलक के बीच में धारण करै ॥६॥ तिलक की रेखा श्रीराम रूप से समझै और बिन्दु से श्रीभूमिजाजी को समझै इस प्रकार तिलक धारण करने से गुणों में अग्रणी होकर श्रीरामभक्तों में अग्रगण्य होता है ॥७॥ भ्रू के अन्त से लेकर ललाटांत मनोहर दो रेखा धारण करै दोनों रेखाओं के मध्य में दो अङ्गुल अन्तर रक्खै ॥८॥

रामायुधांकितं दृष्ट्वाशिरसाप्रणमेत्तुयः।
षष्टिवर्ष सहस्राणि ब्रह्मलोके महीयते ॥९॥
या गतिर्योगियुक्तानां मुनीनां बीतरागिनाम्।
धनुर्बाणांकिते नैव सा गतिर्लभ्यते क्षणात् ॥१०

बाहुमूले धनुर्बाणे नांकितो राम किंकरः ।
शतिलेनाथ तप्ते न तस्य मुक्तिर्न संशयः ॥११॥

श्रीरामायुध धनुष बाण से अङ्कित पुरुष को देखकर जो शिर से प्रमाण करता है वह साठ हजार वर्ष ब्रह्मलोक में बस कर पूजित होता है ॥९॥ योग, युक्त, बीतरागी मुनियों को जो गति प्राप्ति होती है वह धनुर्बाण के अङ्कित होने से क्षणमात्र में प्राप्त होती है ॥१०॥ बाहु-मूल में शीतल अथवा तप्त धनुर्बाण से अङ्कित जो श्रीरामभक्त है उसकी मुक्ति होती है इसमें सन्देह नहीं ॥११॥

शीतलाच्छतगुणंप्रोक्तं तप्तस्य परिधारणे ।
अंकितास्सर्व कालेस्युश्चतुर्वणाश्रमादयः ॥१२॥
चक्राच्छत गुणंप्रोक्तं फलं बाणादि धारणे ।
सर्वेषां रामभक्तानां राम मुद्राभिधारणं ॥१३॥
नांकितो चापबाणाभ्यां न मंत्रोश्तिषडक्षरः ।
न नाम राम संबंधि न रामोपासको भवेत् ॥१४

शीतल से तप्त धनुर्वाणादि धारण में सौगुन फल अधिक होता है इस कारण चारो बर्ण तथा आश्रमों को तप्त धनुर्वाण से अङ्कित होना चाहिये ॥१२॥ धनुर्बाणादि के धारण में शंख चक्र से सौगुण अधिक फल है समस्त श्रीरामभक्तों को अवश्य श्रीराम मुद्राही धारण करना चाहिये ॥१३॥ जो धनुर्वाण से अङ्कित नहीं है तथा जिसके श्रीराम-मंत्र षडक्षर नहीं है तथा श्रीराम सम्बन्धी नाम जिसका नहीं है वह श्रीरामोपासक नहीं हो सकता ॥१४॥

मयावै प्रोच्यते पुत्र मुद्रामाहात्म्य मेव च ।
स्वगात्रे धारयेद्योपि स रामोपासको महान् ॥१५

हे पुत्र यह धनुष बाण मुद्रा का महात्म्य हमने तुमसे कहा जो इस मुद्रा को अपने शरीर में धारण करता है वह महान् श्रीरामो-पासक होता है ॥१५॥

महाशिव संहितायाम् अगस्त्य वाक्यं सुतीक्ष्णं प्रति।

रामायुधाभ्यां तप्ताभ्यां सीतायाः मुद्रयासह ।
अंकिता ये महाप्राज्ञा नित्यमुक्ताश्च मुक्तिदाः ॥१६
मुनेस्मिन्भारते वर्षे चाप बाणांकिता नराः ।
स्वपरं कुल साहस्रं तारयन्ति सुखेन वै ॥१७
येषां कुलेतु एकोपि रामायुधयुतः सुधीः ।
तेपियांति परंलोकं यत्र योग मखादिभिः ॥१८॥
चिरं गताहि नरके पूर्वजा यस्य कस्य वै।
रामायुधांकिते बंशे तेपि यांति परांगतिम् ॥१९॥

महाशिव संहिता में श्रीअगस्त्यजी का बचन सुतीक्ष्ण से है कि तप्त श्रीरामायुध धनुष बाण से तथा श्रीसीता मुद्रा से जो महाप्राज्ञ अङ्कित होते हैं वे नित्य मुक्त तथा दूसरोंको मुक्ति देने वाले होते हैं ॥१६ हे मुने इस भारत वर्ष में जो धनुष बाण से अङ्कित हैं वे सुख से अपने तथा परायों के कुल को हज़ारहो पीढ़ी तक तार देते हैं ॥१७॥ जिनके कुल में एक भी कोई बुद्धिमान श्रीरामायुध धनुर्बाण से अङ्कित होता है उसके कुल के उस परलोक को प्राप्त होते हैं जहां पर योग यज्ञादि करने वाले जाते हैं ॥१८॥ जिस किसी के पूर्बज नरक में बहुत दिन से पड़े हैं बंशमें एक भी धनुष बाण धारण करने वाले होने से वे सब परा गति को प्राप्त होते हैं ॥१९॥

या गतिर्योग युक्तानां नैष्ठिकानां च न्यासिनाम् ।
दुर्लभांतां गतिं चैव प्राप्नोति धनुषांकितः ॥२०॥
धनुषांकित बाहुभ्या मर्चनं देव पितृणाम् ।
तस्य ते पितृदेवाश्च गच्छन्ति परमं पदम् ॥२१॥

धनुः शरांकितोमर्त्यो यद्यत्कुर्याच्छुभंमुने ।
तत्तच्छतगुणं याति बिपरीतेतुनिष्फलम् ॥२२॥
यस्य श्राद्धे च होमे च होतारो धनुषांकिताः ।
तस्यतेपितृदेवाश्च सुधां प्राश्नंति मोदिताः ॥२३

जो गति योग युक्त नैष्ठिक तथा न्यासियों की होती है उस दुर्लभ गति को धनुर्वाण के अङ्कित होने से प्राप्त होता है ॥२०॥ बाहु में धनुष बाण से अङ्कित होकर देवार्चन तथा पितृ तर्पण करते हैं उनके पितृगण परमपद को प्राप्त होते हैं ॥२१॥ धनुष बाण से अङ्कित मनुष्य जो शुभ कर्म करता है वह शतगुण अधिक फल देने वाला होता है जो धनुर्बाण को नहीं धारण करते उनके कर्म निष्फल होते हैं ॥२२॥ जिसके श्राद्ध तथा हवन में धनुष बाण से अङ्कित होने वाले रहते हैं उनके पितृ देवता प्रसन्न होकर अमृत भोजन करते हैं ॥२३॥

येषु श्राद्धेषु होमेषु न कोपि धनुषांकितः ।
तत्रपिंडाहुतिर्याति निष्फलत्वं न संशयः ॥२४॥
सीतायाः तप्तमुद्रांच श्रीरामस्यायुधेउभे ।
धारयन्भुवनं सद्यः पुनात्येव सुनिश्चितम् ॥२५॥

जिनके श्राद्ध वा होम समय में धनुष बाण से अङ्कित कोई भी कर्म कराने वाला नहीं है उनका पिंडदान तथा आहुति निष्फल है इसमें सन्देह नहीं ॥२४॥ तप्त श्रीसीता मुद्रा तथा श्रीरामजी के आयुध धनुष बाण धारण करने से सद्यः लोकों को पवित्र करता है यह सुनिश्चित है ॥२५॥

———

ब्रह्मांड पुराणे कौशल खंडे श्रीराम गीतायाम्
श्रीरामचन्द्र वाक्यं बशिष्ठ प्रति ।

धनुर्वाणादि चिन्हानां धारिणं तिलकान्वितम् ।
तुलसीकाष्ठ मालाढ्यं तं जानीतु सु वैष्णवम् ॥२६

ब्रह्मांड पुराण कोशलखंड श्रीरामगीता में श्रीरामजी का बचन श्रीबशिष्ठजी से है कि जो धनुर्बाणादि चिन्हों को धारण करने वाला उर्द्धब पुंड्र तिलक से युक्त तुलसी काष्ठ माला को धारण करने वाला है उसे सुन्दर बैष्णव जानना चाहिये ॥२६॥

पाद्मे सदाचार संग्रहे।

आद्यस्तु वैष्णवः प्रोक्तः शंख चक्रांकितोहरेः।
धारणं चोर्ध्व पुंड्रणां तन्मंत्राणां परिग्रहः ॥२७॥
अर्चनं जप ध्यानं च तत्पादोदकमेव च।
तन्निवेदित भोज्यं च द्वादशी व्रत निष्ठितम् ॥२८
तुलसीरोपणंविष्णोर्देव देवस्य शार्ङ्गिणः।
भक्तिः षोड़शधाप्रोक्ताभवबंध बिमुक्तये ॥२६॥

पद्म पुराण के सदाचार संग्रह में लिखा है कि पहला बैष्णव वह है जो श्रीहरि के शंख चक्र से अङ्कित हो तथा ऊर्द्ध्व पुंड्र का धारण आचार्य्य से मंत्र का लेना ॥२७॥ भगवान का अर्चन आचार्य्य दत्त मंत्र का जप आचार्य्योपदिष्ट भगवत ध्यान भगवान के चरणोदक का लेना भगवत निवेदितान्न भोजन करना द्वादशी ब्रतमें निष्ठा होना ॥२८॥ तुलसी का लगाना सिंचनादि यह सर्व व्यापक देव देव शांर्ङ्ग धनुषधारी भगवान की षोड्श प्रकार की भक्ति है जो भवबंध छोड़ाने के लिये समर्थ है ॥२९॥

सर्वेषामेव देवानां नमामि पुरुषोत्तमम्।
पूजनीयोहरिर्न्नित्यं ब्राह्मणानां विशेषतः ॥३०॥
तस्माद्वै ब्राह्मणोनित्यं विधिवत्पूजयेद्धरिम्।
तच्चिन्है रंकितः श्रीशपदं प्राप्नोत्य संशयः ॥३१॥
चक्रं वा शंख चक्रं वा शार्ङ्गं चापं शरं तथा।
हुताग्नि नैव संतप्तं सर्व पाप विमुक्तये ॥३२॥

धारयित्वाऽच्च बिधिवद्ब्रह्म कर्म समाचरेत् ॥३३

सर्ब देवों में पुरुषोत्तम देवको मैं नमस्कार करता हूँ क्योंकि श्रीहरि सबको पूजनीय हैं ब्राह्मणों को तो विशेषतः नित्यशः पूजनीय हैं ॥३०॥ तिस हेतु से ब्राह्मण बिधिवत श्रीहरि की पूजा नित्य करै और भगवान् के चिन्हों से अर्थात् आयुधों से अङ्कित होवै वह निस्सन्देह श्रियः पति के पद अर्थात् स्थान को प्राप्त होता है ॥३१॥ भगवत आयुध के धारण की बिधि इस तरह है कि अग्नि होत्र कर उस हुताग्नि में संतप्तकर केवल चक्र को धारण करै अथवा शंख चक्र दोनों को धारण कर अथवा धनुष बाण ही को धारण करै वा शंख चक्र धनुष बाण सबको धारण करै ॥३२॥ बिधि पूर्बक भगवत आयुधों को धारण कर कर्मों का आरम्भ करै अन्यथा कर्म निष्फल होते हैं ॥३३॥

श्रीमन्महारामायणे शिव वाक्यं पार्वतीं प्रति ।

ये जापकाभगवतश्च तपस्विनोये पूजारताः श्रुतिरताश्च विरागयुक्ताः ज्ञानार्णवास्तिलकदामधरा यशस्विनस्तीर्थाटना शुभगुणाः शुभकर्मयुक्ताः ॥३४

महा रामायण में श्रीशिवजी का बचन पार्बती जी से है कि जो भगवन्मंत्र के जापक हैं और तपश्चर्य्या में परायण हैं भगवत्पूजा में रत हैं पवित्रता के साथ रहना बैराग्य से युक्त ज्ञान के समुद्र ऊर्द्धव पुंड्र तिलक तुलसी माला धारण करना पबित्र तीर्थों में बिचरना ये यशस्वी श्रीराम भक्तों के लक्षण हैं जो शुभ गुण शुभ कर्म्म से युक्त हैं ॥३४॥

सर्व्वैर्गुणैर्नियम संयमनित्ययुक्तो निष्कल्मषः सकल सिद्धि करश्चनित्यं योनांकितो धनुश्शरैर्न च मंत्र राजस्योपासको न सज्जनो रघुनन्दनस्य ॥३५॥

श्रीरामसंस्कारविवर्जिताये निष्पुच्छ श्रृंगापशवोनरास्ते शक्तान वेदाश्चभिवर्णितुं यंत्वत्तोमयाख्यात मविस्तरेण ॥३६॥

अहं बिधाता गरुड़ध्वजश्च रामस्यवाले समुपासकानां गुणाननंतां कथितुं न शक्ताः सर्वेषु भूतेष्वपि पावनास्ते ॥३७॥

सब गुणों से तथा नियम संयमादि से नित्य युक्त भी है पाप रहित होकर सब सिद्धियों का देने वाला भी है पर जो धनुष बाणसे अङ्कित नहीं है श्रीराम षडक्षर मंत्र राजका उपासक नहीं है वह श्रीरघुनन्दन जू का जन अर्थात् दास नहीं है ॥३५॥ श्रीरामजी के संस्कार से जो पुरुष बिवर्जित हैं वे मनुष्य होने पर भी बिना शृंग पुच्छ के अमंगल पशु हैं। हे देबि जिसको वेद भी नहीं कह सकते हैं वह हमने तुमसे संक्षेप से कहा ॥ ३६ ॥ हे बाले हम बिधाता ब्रह्मा, गरुड़ध्वज बिष्णु भगवान, श्रीरामजी के उपासकों के अनंत गुण कथन करने को समर्थ नहीं हैं क्योंकि वे श्रीरामभक्त सर्ब भूतोंमें अति पवित्र हैं ॥३७॥

—***—

* राग सारंग *

धरु धनुष बाण श्रीराम के ॥ टेक ॥

जो गति जोग बिराग ज्ञान तप जापक आठो जाम के।
सोइगतितेहिछनहोतभुजांकितशर दक्षिण धनु बामके ॥
जो कोइ कोटिन जन्म २ भरि किहिसि कर्मबिनु कामके।
धनुष बाण अंकित होतहि ते अधिकारी परधाम के ॥
पितृदेव कुल कर्म आदि बहु कृत गायक श्रुति सामके।
रामायुध अंकित बिनु सब क्रम जिमिआहुतिखाकामके ॥

नहिं अंकित धनुबान षडक्षर मंत्र न रघुबर नामके ।
रामचरणसो न राम उपासक जद्यपि शुभ गुनग्रामके ॥

इति श्रीराम-नवरत्न सार संग्रहे श्रीरामायुध प्रभाव सूक्ष्म बर्णनं नाम चतुर्थं रत्नम् ।

—***—

* दोहा *

जीव ब्रह्म सबमें रम्यों, रमु क्रीड़ा सो राम ।
राम उपासक बिनु न मिलु, निज स्वरूप परधाम ॥१

यद्यपि जीव ब्रह्म समस्त जगत में व्याप्त हैं वह श्रीरामजी रमु क्रीड़ायाम् इस धात्वर्थ के समान सबमें रमण किये हैं तथापि बिना श्रीराम उपासक हुए अपने स्वरूप की यथार्थ प्राप्ति तथा परधाम नहीं मिल सकता है । यह सिद्धान्त इस पंचम रत्नमें दिखलाया जायगा ॥१॥

—***—

तत्र प्रमाण माह बशिष्ठ संहितायाम् ।

न श्रीराम ब्रतादन्यद्ब्रतं सर्वार्थ साधनम् ।
न रामाराधनादन्यो यज्ञो वेदोपि दृश्यते ॥२॥
रामदास्यात्परो धर्मो यस्मिन्नन्यो निरूप्यते ।
शास्त्रं तन्म्लेक्ष बौद्धानां बिश्वसेन्नविचक्षणः ॥३

श्रीबशिष्ठ संहिता में प्रमाण है कि श्रीरामजी के व्रत से अन्य सर्वार्थ साधक कोई ब्रत नहीं है श्रीरामजी के आराधन से अन्य श्रेष्ठ यज्ञ बेद में नहीं देखा जाता है ॥२॥ श्रीरामजी के दास्यता से पर धर्म्म किसी जगह देखा जाय तो वह शास्त्र म्लेक्ष बौद्धों का है बुद्धिमान उसमें बिश्वास न करैं ॥३॥

—***—

महाशंभु संहितायाम् अगस्त्य वाक्यं सुतीक्ष्णं प्राति।
कृपा च साधनं सिद्धिर्भक्ति श्रीमैथिली पतेः ।
अन्यत्व केवल श्रमं साधितं मत वादिभिः ॥४॥
शुद्धं द्वैत मत बिद्धि सेव्य सेवक भावदम् ।
सामीप्यं च सुमुक्तिं च नित्यं गोलोक धामकम्॥५
ज्ञान वैराग्य संतोषा क्षमाशीलादि कानि वै ।
तुलसी काष्ट संयुक्ता विरेजू राम भावकाः ॥६॥

महाशंभु संहिता में श्रीअगस्तजी का बचन सुतीक्षणजी से है कि श्रीमैथिली पति श्रीरामजी की भक्ति केवल कृपा रूप है और साधन सिद्धि भी यही है इससे अन्य धर्म्म केवल मत बादियों ने श्रम मात्र साधा है ॥ ४ ॥ सेव्य सेवक भाव देने वाला इस प्रकार यह द्वैत मत सिद्ध है अद्वैत मत नहीं है सामीप्य मुक्ति तथा गोलोक मध्यगत साकेत धाम यही शुद्ध मत है यहाँ पर द्वैत मत इस तात्पर्य्य से है कि जीव ईश्वर दो हैं केवल अद्वैत मत नहीं है जैसे कि काष्ट जिह्व स्वामीजी ने कहा है कि "द्वैत सदा अद्वैत कबहुँ नहिं चौड़े कहत खुलासे। दास भाव का डंका बाजै वेदन की महिमा से" इससे संग्रहकर्ता श्रीकरुणा-सिन्धुजी महाराज बिशिष्टा द्वैतके नहीं रहे द्वैत मत के रहे यह कहना भूल है ॥ ५ ॥ ज्ञान, बैराग्य, संतोष, क्षमा, शीलादिक गुण वाले तथा तुलसी काष्ठ माला से संयुक्त श्रीराम भक्त शोभित होते हैं ॥ ६ ॥

यज्ञोपवीतं धौतं च कौपीनाच्छादनं परम् ।
गृह्णंति धातु पात्रं वा तुंबिकां राम सेवकाः ॥७॥
शृंगारं मैथिली कृत्यं श्रियं बिन्दुं च चन्द्रिकाम् ।
करोति रसिको नित्यं तिलकं तंतु मन्यते ॥८॥
शील संतोष सत्यादि निष्कामार्जव लक्षणम् ।
भोज्यं महाप्रसादं च पानं पादोदकं सदा ॥९॥

दण्डवत्प्रोक्तमुभयं बन्दनं स्वामि दक्षिणे ।
गुरुं हरि समं मन्येत् सेव्यं चैव परिक्रमम् ॥१०

यज्ञोपवीत तथा कौपीनाच्छादन धौत बस्त्र, धातु पात्र अथवा तुम्बिका श्रीराम सेवक ग्रहण करते हैं ॥ ७ ॥ शृंगार रसकी भावना श्रीमैथिलीजू की सेवा बिन्दु सहित श्री तथा चन्द्रिका इस प्रकार के तिलक को रसिक जन नित्य करते हैं और मानते हैं ॥८॥ शील, सन्तोष, सत्य भाषण, निष्काम, आर्जव अर्थात् हृदय के सूधे कपट रहित महाप्रसाद का भोजन करना, चरणोदक को सदा पान करना ॥९॥ स्वामी के दक्षिण भाग में दो दण्डवत करना गुरू को हरि समान मानना, वैसाही सेवा करना श्रीरामजी के समान परिक्रमा करना ॥१०॥

अन्यच्च ।

तुलसी माल तिलकं धनुर्वाणांकितौ भुजौ ।
राममंत्रश्च तन्नाम संस्काराः रामसेवके ॥११॥
अक्रोध वैराग्य जितेन्द्रियत्वं क्षमादया सर्वजन प्रियत्वं निर्लोभदाता भयशोकहर्ता भक्तस्यचिन्हानि दशांतराणि ॥१२॥
एवं सर्व्व गुणैर्युक्तः हरिभक्तिपरायणः ।
बाह्याभ्यंतर संशुद्धस्ततोयाति परांगतिम् ॥१३॥

और भी कहा है कि तुलसी की माला और तिलक, धनुर्वाण से अङ्कित भुजा, श्रीराम मंत्र, श्रीराम नाम से युक्त अपना नाम यही पंच संस्कार श्रीरामजी के उपासकों में होते हैं ॥ ११ ॥ क्रोध को जीतना, बिषयोंसे बैराग्य इन्द्रियोंको बश करना, क्षमा, दया, सर्ब जनोंको प्रिय होना, लोभ रहित, प्राप्त द्रव्य को उचित पात्र को देना, भय शोक को हरना ये दश चिन्ह अन्तरंग श्रीरामभक्तों के हैं ॥ १२ ॥ इस प्रकार के सर्ब गुणों से युक्त श्रीहरिभक्ति में परायण बाह्याभ्यंतर से शुद्ध होकर परम गतिको प्राप्त होता है ॥ १३ ॥

पुनरपि महा सदाशिव संहितायाम ।

श्रीमन्नारायणस्यैव शिष्या ये कथिताः शुभाः ।
पूर्वोक्ता राममंत्रस्य ये भूवंस्ते तथा भवन ॥१४॥
भविष्यंति कलौह्यन्ते प्राकृता मतबादिनः ।
मंत्र नामानुचिन्हानि कल्पयिष्यंति मानिनः ॥१५
यथा रात्रौ नार्क भासोदीप तेजः प्रशस्यते ।
आदिमूलादूगतं भ्राष्ट्यमधोमूलं समाश्रिताः ॥१६

महा सदा शिव संहिता में लिखा है कि श्रीमन्नारायण भगवान के जो शिष्य कहे गये हैं वे परम शुभ हैं। जो श्रीराम मंत्रके उपासक जैसे हुए हैं वैसे ही वे सब हुए पर कलियुग में अन्य प्राकृत मतबादी ऐसे होंगे जो मंत्र, नाम, चिन्हों की अन्य कल्पना करेंगे ॥१५॥ जैसे रात्रि में सूर्य्य का प्रकाश नहीं है वहाँ दीपक ही का तेज प्रशस्त होता है। इसी तरह आदि मूल गत तत्व से भ्रष्ट होने पर नीचे के मूल में समाश्रित होते हैं ॥ १६ ॥

स्पर्द्धयिष्यंति चान्योन्यं यथा मोहं गताबुधाः ।
यथा मतिस्तथागम्यं गमिष्यंति बिधार्मिकाः ॥१७
श्रीराम मंत्रस्यांशानि मंत्राण्यन्यानि विद्धि च ।
हनुमताचार्येणाहो रामधामसतां पदम् ॥१८॥
श्रीजानक्याः पतिं सर्वे भजध्वं मंगलायनम् ।
राममंत्रेणायुधाभ्यां युक्ताः शुशुभिरे भुवि ॥१९॥

परस्पर मोह में प्राप्त होकर पंडित हुए स्पर्धा करेंगे जैसी बुद्धि है जैसी गति है वैसे ही वे विधार्मिक चलैंगे ॥१७॥ अन्य सब मंत्र श्रीराम-मंत्रके अंश जानना श्रीराम धामही सज्जनों का प्राप्य स्थान है यह श्रीआचार्य्य रूप श्रीहनुमानजी ने कहा है ॥१८॥ श्रीजानकी पति मंगल

रूप हैं उनको सब भजो पहले के लोग भी श्रीराममंत्र तथा श्रीरामायुध धनुष बाण से युक्त होकर पृथ्वी में शोभित हुए हैं ॥ १९ ॥

सुरगुर्वादि गुरवो राम मंत्रस्य सेवकाः ।
श्रीगुरोमारुतेः शिष्यो सुग्रीवश्च कपीश्वरः ॥२०॥
श्रीरामस्या युधौ तप्तौ राममंत्रं व्यधारयत् ।
पद्माष्टा दश संख्याता स्वसैन्याश्च हनुमतः ॥२१
दीक्षितास्तेन मंत्रेण धनुर्वाणेन चांकिताः ।
हनुमच्छिष्यतां प्राप्तो महाराजो बिभीषणः ॥२२॥
रामायुधाभ्यां तप्ताभ्या मंकितश्च समुद्रया ।
तथा तस्य प्रजाः सर्वा चिन्हिता राम लांछनैः ॥२३
राज मार्ग मिमं बिद्धि रामोक्तं जानकी कृतम् ।
यद्दते चान्य मार्गास्तु चौराणां बीथिका यथा ॥२४

देव गुरु बृहस्पति आदि श्रीराम मंत्रही के सेवक हैं अर्थात् उपासक हैं कपीश्वर श्रीसुग्रीवजी ने भी श्रीमारुतात्मज श्रीहनुमानजी को गुरू माना और तप्त श्रीरामायुध धनुष बाण तथा श्रीराम मंत्रको धारण किया ॥२०॥ अठारह पद्म यूथपों ने भी श्रीहनुमानजी से दीक्षित होकर श्रीरामजी के आयुध तथा श्रीराम मंत्रको धारण किया ॥२१॥ महाराज बिभीषण भी मुद्रा के सहित तप्त धनुष बाणसे अङ्कित होकर श्रीहनुमानजी के शिष्यता को प्राप्त हुए और श्रीराम मंत्र लिया ॥२२॥ और उनकी सब प्रजा भी श्रीरामजी के चिन्हों से अङ्कित हुई ॥२३॥ इसको राज मार्ग जानों क्योंकि यह श्रीरामजी का कहा हुआ है । श्रीजानकीजी ने इसका प्रचार किया इसके बिना अन्य मार्ग चोरों की गली हैं ॥ २४ ॥

आद्याचार्य्यं हनुमंतं त्यक्त्वाह्यन्य मुपासते ।
क्लिश्यंति चैवते मुग्धा मूलहा पल्लवाश्रिताः ॥२५

पुरस्त्रियस्तद्गतमानसास्ता
भावान्विताश्चारुविशालनेत्राः ।
नामानि चैतानि सदा भजन्ते
हा राम ! सीतावर ! राघवेति ॥

आर्ये ! स्वपुत्रं जगतामधीशं
मत्वा तदीयं जप नाम नित्यम् ।
दुःखार्तिहं मङ्गलकारि हारि
हा राम ! सीतावर ! राघवेति ॥

सुधामयं भव्यमयं भवेऽस्मिन्
भवाब्धिमग्नोद्धरणे समर्थम् ।
न विस्मर त्वं खलु नाम जिह्वे !
हा राम ! सीतावर ! राघवेति ॥

यन्नाम जप्त्वाऽप्यतिदुश्चरित्रो
विना प्रयासं भवसिन्धुपारम् ।
जगाम तन्नाम न विस्मर त्वं
हा राम ! सीतावर राघवेति ॥

नक्तं दिवं भ्रातृवियोगतप्त
स्तपश्चरन् श्रीभरतो महात्मा ।
जजाप तल्लीनमनास्तदाख्यां
हा राम ! सीतावर ! राघवेति ॥

(जगद्गुरु श्रीहनुमदाचार्यकृता)

(श्री सीतारामस्तोत्रम्)

卐 विरह गीता 卐

हा जानकीवल्लभ ! राघवेन्द्र !
हा नाथ ! नारायण ! रावणारे !
नामानि चैतानि भजस्व चेतः !
हा राम ! सीतावर ! राघवेति ॥

अशक्नुवन् सोढुमधीरनेत्रः
सदैव रामार्पितचित्तवृत्तिः ।
वियोगजज्वालमुवाच राजा
हा राम ! सीतावर ! राघवेति ॥

मातापि गेहे विरहेण तप्ता
नामानि भक्तार्तिविनाशकानि ।
नक्तं दिवं साश्रुमुखी ब्रवीति
हा राम ! सीतावर ! राघवेति ॥

समावृता घोरनिशाचरीभिः
सीताऽधिलङ्कं खलु निः सहाया ।
जगाद जिह्वे ! भज नाम पूतं
हा राम ! सीतावर ! राघवेति ॥

अन्तः पुरेऽज्ञानतमोऽपहारि
मृगीदृशो नीरजकोमलाङ्घ्रयः ।
जपन्ति नामानुपलं सचित्तं
हा राम ! सीतावर ! राघवेति ॥

श्रीमैथिल्याश्च मंत्रंहि श्रीगुरुं मारुतं महत् ।
सखी भावं दंपतीष्टं भुक्ति मुक्ति प्रदं सदा ॥२६

श्रीजानकी संप्रदायं राम रास मनन्यताम् ।
ऋते केपि न यास्यंति बांछितं फल मेव च ॥२७

श्रीरामस्यायुधौ तप्तौ जानकी मुद्रिकां बिना ।
पारमेष्ठ्यं न प्राप्नोति ज्ञानादि साधनै रपि ॥२८

प्रथम आचार्य्य श्रीहनुमानजी को छोड़कर जो अन्य उपासना करते हैं वे मुग्ध मूलको छेदन कर पल्लवाश्रित हुए क्लेश पाते हैं ॥२५॥ श्रीमैथिलीजी के सहित श्रीरामजी का मंत्र श्रीहनुमानजी को महान गुरू तथा श्रीसीतारामजी को प्रिय सखी भाव यह सदा भुक्ति मुक्ति देने वाला है ॥२६॥ श्रीजानकी रूपा श्रीसम्प्रदाय श्रीरामजी की अनन्यता इसके बिना कोई भी बाँछित फलको नहीं पा सकते हैं ॥२७॥ तप्त श्रीरामायुध तथा श्रीजानकी मुद्रिका के बिना ज्ञानादि साधनों से भी पारमेष्ठ्य पदको नहीं पा सकते हैं ॥ २८ ॥

रामायुधांकितश्चैव तनुं त्यजति यः पुमान् ।
याम्याश्चपार्षदास्तत्र नमन्तिशिरसाहितम् ॥२९

युग्म मंत्रं च यो नित्यं धनुर्वाणौ च धारयेत् ।
स जानकीबल्लभस्य सामीप्यं सुखमृच्छति ॥३०

युग्म मंत्रं बिनान्नास्ति मंत्रः कोपि सुखप्रदः ।
जानकीबल्लभोपास्ति विनोपास्तिर्नबल्लभा ॥३१

हनुमत्परमाचार्य्यं बिनाचार्य्यो न कोपि च ।
इति पद्धति निर्णीतं पूर्वोक्तं च मयोदितम् ॥३२

श्रीरामजी के आयुधों से अङ्कित हुआ जो पुरुष शरीर को छोड़ता है उस समय यमराज के दूत उसको दरसे शिरसे प्रणाम करते हैं ॥२९॥

जो युगल मंत्रको तथा धनुष बाण को नित्य धारण करता है वह श्रीजानकी बल्लभजू के सामीप्य तथा सुखको प्राप्त होता है ॥३०॥ श्रीसीतारामजीके युगल मंत्रके बिना कोई भी ऐसा सुखप्रदमन्त्र नहीं है और श्रीजानकी बल्लभजू के उपासना के बिना कोई उपासना भी ऐसी प्रिय नहीं है ॥ ३१ ॥ परमाचार्य्य श्रीहनुमानजी के बिना ऐसा कोई आचार्य्य भी समर्थ नहीं है यह पूर्वका कहा हुआ सम्प्रदाय का निर्णय हमने तुमसे कहा ॥ ३२ ॥

—***—

सदा शिव संहितायाम् सौमित्रि वाक्यं वेदान्प्रति ।

सीतांकितो धनुर्वाणात् प्रथमं च महा शिवः ।
सीतयाचांकितः पश्चाद्धनूमांश्च हरि प्रियः ॥३३
महाशंभुः शिवं प्राह स शिवो नारदं तथा ।
नारदश्चाह बाल्मीकिं बाल्मीकिश्च कुशीलवौ ॥३४
हनूमांस्तु अगस्त्याय अगस्त्यश्च सुतीक्ष्णकम् ।
सुतीक्ष्णेन महाभागा चांकिता वहवो मुने ॥३५
भविष्यंति कलौ घोरे जीवाहरि वहिर्मुखाः ।
तेषामुद्धर्णार्थाय स्वरूपज्ञान हेतवे ॥३६॥
रामाज्ञया हनूमांश्च माध्वाचार्य्य प्रभाकरः ।
रामानन्दः स्वयं रामः प्रादुर्भूतो महीतले ॥३७॥
बिनाचिन्हं धनुर्वाणं बिना मंत्रं षडक्षरम् ।
पूजांयश्च प्रकुर्वीत राघवो न प्रसीदति ॥३८॥

सदाशिव संहिता में श्रीलक्ष्मणजी का बचन बेदों से है कि पहले धनुर्बाण से अङ्कित महाशिव को श्रीजानकीजी ने मन्त्र दिया पश्चात् श्रीजानकीजी ने श्रीहनुमानजी को अङ्कित किया और मंत्र दिया ॥३३॥ इसमें दो शाखा चली एक यह महाशम्भु ने शिवजी को और शिवजी ने नारदजी को नारदजी ने बाल्मीकिजी को बाल्मीकिजी ने लव कुश

जी को दिया ॥ ३४ ॥ दूसरी यह है श्रीहनुमानजी ने अगस्त्य जी को अगस्त्य जी ने सुतीक्ष्ण जी को सुतीक्ष्ण जी ने महाभाग्यशाली बहुत मुनियों को धनुष बाण से अङ्कित कर श्रीराम मंत्र दिया ॥ ३५ ॥ घोर कलियुग में जीव सब श्रीरामजी से बहिर्मुख होंगे तिनके उद्धार के लिये तथा स्वरूप ज्ञान प्राप्ति के लिये ॥३६॥ श्रीरामजी की आज्ञा से श्रीहनुमानजी माध्वाचार्य्य रूप होकर सूर्य्यवत् प्रकाशित होंगे और श्रीरामजी श्रीरामानन्द रूप होकर पृथ्वी तलमें अवतीर्ण होंगे ॥ ३७ ॥ धनुर्बाण चिन्ह के बिना तथा षडक्षर मंत्रके बिना जो पूजा करता है उसके ऊपर श्रीरामजी प्रसन्न नहीं होते ॥ ३८ ॥

धर्म्मं दद्यात् धनं दद्यात् प्राणं दद्यात् यशस्तथा ।
ध्यान मंत्रो न दातव्य ऋतेरामस्य संस्कृतिम् ॥३९
कल्पकोटि सहस्त्राणि कल्प कोटि शतानि च ।
पंचांगोपासनेनैव रामे भक्तिः प्रजायते ॥४०॥

धर्म दे देवें धन देवे प्राण देवे तथा यश देवे पर श्रीरामजी के संस्कार बिना अर्थात् धनुष बाणके बिना ध्यान तथा मंत्र न देवे ॥३९॥ क्योंकि कोटि हजार कल्प कोटि शत कल्प पंचांगोपासना करने पर श्रीरामजी में भक्ति होती है ॥४०॥

श्रीगोस्वामि वाक्यं दोहावली ग्रंथे ।

* दोहा *

तुलसी रामहि छाड़ि के, करै और को जाप ।
ताके मुख में दीजिये, नवसादर को बाप ॥४१॥

श्रीअग्रदास कुंडलिया छन्द ।

भुस ऊपर को लेपनो अरु बारू की भीति ।
अरु बारू की भीति भूत की मनहु मिठाई ।

बाजीगर को बाग स्वप्न में नव निधि पाई ॥
अजयाअस्तन कंठ तुच्छ बादर की छाया ।
पूरब बस्तु बिसारि पछिम दिसि ढूढ़न धाया ॥
आन उपासक राम बिनु अग्र सु वैसी रीति ।
भुस ऊपर को लेपनो अरु बारू की भीति ॥४२॥

* राग सारंग *

कोइ राम उपासक लाख में ॥ टेक ॥

रमेउ चराचर जीव ब्रह्म दोउ राम रूप श्रुति साखमें ।
ताते रामतजि आन उपासक करत होम जनु राखमें ॥
राम नामको सकल पसारा महा मुनिन कहि भाखमें ।
ताते श्रीरघुबीर मयी लखु मारु दुष्ट निज कांखमें ॥
तिलक दाम अंकितभुज धनुशरभुक्ति-मुक्ति धरिताखमें ।
राम स्वरूप बसाय देहु निज भीतर बाहिर आंखमें ॥
रामचन्द्र तजि अपर देव भजि करहिं कर्म शुभ माखमें ।
रामचरन ते चित्र बनावत जड़ बारू के पाखमें ॥

इति श्रीराम-नवरत्न सार संग्रहे उपासना लक्षण वर्णनं नाम पंचमं रत्नम् ५ ।

———

* दोहा *

परम पुरुष दशरथ सुवन चरित अमित श्रुतिसार ।
रामायण यक अक्षरो कहत नास संसार ॥ १ ॥

कर्म योग वैराग्य दृढ़ ब्रह्म ज्ञान जप ध्यान ।
रामचरण नहिं राम मिलु बिनु उपासना ज्ञान ॥२॥

अब छठवें रत्नमें श्रीकरुणासिन्धुजी महाराज सर्व शास्त्र प्रतिपाद्य परम पुरुष श्रीरामजी हैं यह दिखलाते हुए श्रीमद्रामायणादि सद्ग्रन्थों का प्रमाण देते हुए उपासना को दृढ़ करेंगे । इससे इस रत्नका सारार्थ दो दोहों से दिखला रहे हैं ।

परम पुरुष श्रीदशरथ सुवन श्रीरामजी हैं क्योंकि इनके श्रुति सार चरित्र अमित हैं सौ करोड़ रामायण एक कवि का है जिसके एक अक्षर भी उच्चारण करने से ब्रह्महत्यादि महा पातक क्षय पूर्वक संसार विनाश होता है । इस हेतु से कर्म, योग, वैराग्य दृढ़ होने पर भी ब्रह्म ज्ञान, जप, ध्यान यथा सम्भव होते हुए भी बिना उपासना ज्ञान के श्रीरामजी प्राप्त नहीं होते हैं ॥ २ ॥

———

तत्र प्रमाणमाह वाल्मीकीये लव कुश वाक्ये ।

* श्लोक *

वेदवेद्ये परे पुंसि जाते दशरथात्मजे ।
वेदः प्राचेतसादासीत्साक्षाद्रामायणात्मना ॥ ३ ॥
चरितं रघुनाथस्य शतकोटि प्रविस्तरम् ।
एकैकमक्षरं पुंसां महापातक नाशनम् ॥ ४ ॥

श्रीवाल्मीकीय रामायण के मंगलाचरण में श्रीलवकुशजी का वचन है कि वेद वेद्य पर पुरुषने जब श्रीदशरथात्मज रूपसे अवतार लिया तब वेद ने भी प्राचेतस महर्षि श्रीमद्वाल्मीकि द्वारा साक्षात् रामायण रूपसे अवतार लिया । तात्पर्य्य यह है कि वेद ने यत्तदद्रेश्यम-ग्राह्य अपाणि पादो एवमादि वाक्यों से ब्रह्मको अरूप, अग्राह्य बतलाया और ब्रह्म जब प्रगट हुआ तब कोटि कन्दर्प लावण्य धाम दिव्य मंगल विग्रह द्विभुज श्याम सुन्दर रूपसे देखा गया तब वेद ने समझा कि लोग हमारे वास्तविक अभिप्राय को न समझ कर हमें झूठा बनावेंगे

इस निमित्त वेदोपबृंहण श्रीमद्रामायण रूपसे प्रगट होकर श्रीरामजी के गुण रूपादिकों को स्पष्टतया बर्णन किया वह श्रीरघुनाथ चरित रामायण शत कोटि विस्तार वाला है जिसका एक एक अक्षर पुरुषों के ब्रह्महत्यादि महा पातकों का नाशक है ॥ ४ ॥

वाल्मीकीये अयोध्या काण्डे,
श्रीसुमित्रा वाक्यं श्रीकौशल्यां प्रति ।

सूर्यस्यापि भवेत्सूर्योह्यग्नेरग्निः प्रभोः प्रभुः ।
श्रियः श्रीश्चभवेदग्र्या कीर्त्याः कीर्तिः क्षमाक्षमा ॥५
दैवतं देवतानां च भूतानां भूतसत्तमः ।
तस्य के ह्यगुणा देवि देशे वाप्यथवावने ॥६॥
पृथिव्या सह वैदेह्या श्रिया च पुरुषर्षभः ।
क्षिप्रं तिसृभिरेताभिः सह रामोऽभिषेक्ष्यते ॥७॥

श्रीवाल्मीकीय अयोध्या कांड में श्रीसुमित्रा अम्बा का बचन श्रीकौशल्या अम्बा के प्रति है कि हे देवि आपके पुत्र श्रीरामजी सूर्य्य के भी सूर्य्य हैं अर्थात् सूर्यान्तर्यामी होकर उनके भी प्रकाशक हैं । तथा अग्नि के भी अग्नि हैं और जो सर्ब जगत का प्रभु है उसके भी प्रभु हैं इसी तरह श्रीजनकात्मजाजी भी श्री की श्री हैं कीर्ति की भी कीर्ति हैं और क्षमा की भी क्षमा हैं अथवा श्रीरामजी केही सब बिशेषण हो सकते हैं ॥५॥ और श्रीरामजी देवतों के भी दैवत हैं भूतों के भी सर्ब सत्ताप्रद भूत सत्तम हैं हे देबि अपने देशमें अथवा बनमें रहने पर श्रीरामजी को अगुण अर्थात् दुःख कहाँ से हो सकते हैं ॥६॥ बहुत शीघ्र पृथ्वी और सर्ब लोक श्री तथा श्रीवैदेही जी इन तीनों के सहित श्रीरामजी अभिषेक को प्राप्त होंगे ॥७॥

सुन्दर कांडे हनुमद्वाक्यं रावणं प्रति ।

ब्रह्मास्वयम्भूश्चतुराननोवा रुद्रस्त्रिनेत्रस्त्रिपुरा-

न्तकोवाइन्द्रोमहेन्द्रः सुरनायकोवा त्रातुं न शक्ता-
युधिरामवध्यम् ॥८॥

परं ब्रह्म परं तत्वं परं ज्ञानं परं तपः ।
परं बीजं परं क्षेत्रं परं कारण कारणम् ॥६॥

सुन्दर कांडमें श्रीहनुमानजी का बचन रावण से है कि हे रावण ! चार मुख वाले स्वयम्भू ब्रह्मा, प्रलयकारी तीन नेत्र वाले त्रिपुरा सुरके नाशक श्रीरुद्रदेव तथा समस्त देवतों का नायक अतिशय ऐश्वर्य विशिष्ट महेन्द्र जो इन्द्र है ये सब मिलकर संग्राम में जिसे श्रीरामजी मारा चाहते हैं उसके बचाने में समर्थ नहीं है ॥८॥ त्रिजटाने भी श्रीजान-कीजीसे कहै है श्रीरामजी परब्रह्म हैं और परतत्त्व हैं पर ज्ञान रूप परम तप रूपी परं बीज परम क्षेत्र कारणों के भी पर कारण श्रीरामजी हैं ॥९॥

—***—

युद्ध काण्डपि ।

आत्मानं मानुषंमन्ये रामं दशरथात्मजम् ।
योहं यस्य यतश्चाहं भगवन्स्तद् ब्रवीहिमे ॥१०

युद्ध कांडमें भी ब्रह्मा जी से श्रीरामजी ने कहा है कि परत्व भाव की अपेक्षा मैं अपने को मनुष्य भाव श्रेष्ठ समझता हूँ सब नामों से श्रीराम नाम मुझे विशेष अभिमत है और मैं चक्रवर्ति कुमार हूँ यह मुझे विशेष प्रिय है जो मैं हूँ यत्सम्बन्धी हूँ जहाँ से अवतीर्ण हुआ हूँ भगवन् आप मुझे कहिये ॥१०॥

--***--

स्कन्द पुराणे शिव वाक्यम् ।

सकृदुच्चरितं ये न रामायण मनुत्तमम् ।
भस्मी भवन्ति पापौघा हदिरामस्तु तद्रवात् ॥११

श्रीमद्रामायणस्यैव श्रवणात्कीर्तनाच्छिवे ।
सद्यः पुनन्ति वै सर्वे चिरकालं तथान्यतः ॥१२

श्रीरामपरत्व कहकर अब श्रीरामचरित माहात्म्य दिखलाते हैं। स्कन्द पुराण में श्रीशिवजी का बचन श्रीपार्वतीजी से है कि हे शिवे! सर्वोत्तम श्रीरामायण को जिसने एक बार भी उच्चारण किया है उसके पाप समूह भस्म हो जाते हैं और हृदय के पवित्र होने से द्रवी भाव होने पर श्रीरामजी हृदय में आकर बसते हैं ॥११॥ श्रीमद्रामायणही के श्रवण कीर्तन से सब प्राणी सद्यः पवित्र होते हैं अन्य साधनों से चिरकाल में पवित्रता पाते हैं ॥१२॥

--***--

श्रीमन्महारामायणे शंकर वाक्यम् पार्वतीं प्रति ।

गुरु मंत्रानुसारेण लयं ध्यानं जपं तथा ।
पाठं तीर्थं च संस्कार मिष्टं सर्वं परात्परम् ॥१३॥
इष्ट पूजां प्रकुर्याद्वै तत्कथां शृणुयात्पठत् ।
तदंश व्यापकं विश्वं मन्येतसाप्युपासना ॥१४॥
न विधिर्ननिषेधश्च प्रेमकुर्याद्रघूत्तमे ।
इन्द्रियाणामभावः स्यात्सोऽनन्योपासकः स्मृतः॥१५

श्रीमन्महारामायण में श्रीशंकरजी का वाक्य श्रीपार्वतीजी से है कि गुरु मंत्रके अनुसार ही लय, ध्यान जप तथा पाठ, तीर्थ और संस्कार यही पर से पर सबको इष्ट है अर्थात् अभिमत है ॥१३॥ तात्पर्य यह कि इष्ट ही की पूजा करै उन्हीं की कथा सुने उन्हीं के चरित्र को पढ़ै जगत सब उन्हीं का अन्श है विश्व में वही व्यापक हैं इस प्रकार मानकर गुरुदत्त मंत्रका जप मंत्र प्रतिपाद्य देवका ध्यानादि करै इसीका नाम उपासना है ॥१४॥ उपासक प्रधानतया न बिधि को देखै न निषेध को देखै किन्तु अपने उपास्य देव रघुकुल श्रेष्ठ श्रीरघूत्तम में इस प्रकार प्रेम करै जिससे सर्वेन्द्रिय वृतियों का अभाव हो जाय इस लक्षण वाले को अनन्य उपासक कहते हैं ॥१५॥

ध्याने पाठे जपे होमे ज्ञाने योगे समाधिभिः ।
विनोपासनयामुक्तिर्नास्तिसत्यं ब्रवीमिते ॥१६

यैः कृतं भक्तिविज्ञानमनन्योपासनंविना ।
न प्राप्तिर्भगवद्रूपे सत्यं सत्यं वदामिते ॥१७॥

अनन्य उपासना के बिना जिन्होंने भक्ति का विज्ञान संपन्न भी कर लिया है तथापि भगवद्रूप में उनकी प्राप्ति नहीं है यह मैं तुम से सत्य सत्य कहता हूँ ॥१७॥

--***--

पद्म पुराणे शंकर वाक्यं पार्वतीं प्रति ।

न तत्पुराणं नहि यत्र रामो यस्यां न रामो न च संहितासा सनेतिहासो नहि यत्र रामः काव्यं न तत्स्यान्नहि यत्र रामः ॥१८॥ शास्त्रं न तत्स्यान्नहि यत्र रामः तीर्थं न तद्यत्र न रामचन्द्रः यागः सआगो नहि यत्र रामो योगस्सरोगो नहि यत्र रामः ॥१९॥ न सासभा यत्र न रामचन्द्रः कालोप्यकालो कलिरेवसोऽस्ति संकीर्तते यत्र न रामदेवो विद्याप्यविद्या रहिताखिनेन ॥२०॥

पद्म पुराणमें श्रीशंकरजी का बचन श्रीपार्वतीजी से है कि जिसमें श्रीरामजी का वर्णन न हो वह पुराण नहीं है जिसमें श्रीरामजी का कीर्तन न हो वह संहिता नहीं है जिसमें श्रीरामजी नहीं हैं वह इतिहास नहीं है जिसमें श्रीरामजी न हों वह काव्य नहीं है ॥ १८ ॥ जिसमें श्रीरामजी का नाम न हो वह शास्त्र नहीं है जहाँ श्रीरामजी न हों वह तीर्थ नहीं है । जिसमें श्रीरामजी का पूजन न हो वह याग नहीं है किन्तु आगः अपराध रूप है जहाँ श्रीरामजी नहीं है वह योग नहीं है किन्तु रोग है ॥ १९ ॥ जहां श्रीरामजी न हों वह सभा नहीं है जिस समय श्रीरामजी के नाम गुणादि का कीर्तन न हो वह काल नहीं है किन्तु अकाल कलि काल है और श्रीरामजी से रहित विद्या नहीं है किन्तु अविद्या है ॥२०॥

स्थानं न तद्यत्र न रामकीर्तिः श्रीरामनामा मृतशून्यमास्यम् । सर्पालयं प्रेत गृहं गृहं तद्यत्रार्च्यते नैव महेन्द्र पूज्यः ॥२१॥ उक्ते न किं स्याद्बहुनातु विश्वं सर्वंमुधास्याद्यदि राम शून्यम् तदेव सत्यं विहितं तदेव तदेव योग्यं रघुनाथ युक्तम् ॥२२॥

जहां श्रीरामजी का कीर्तन न हो वह स्थान नहीं है तथा श्रीराम-नामामृत से शून्य मुख सर्प के रहने का बिल है और जिस गृह में श्रीरामजी की पूजा न होती हो वह प्रेतों के रहने का स्थान स्मशान तुल्य है ॥२१॥ बहुत कहने से क्या है यदि श्रीराम शून्य हो वह विश्व मात्र व्यर्थ है वही सत्य है वही उत्तम है और वही योग्य है जो श्रीरघु-नाथजी के रूप गुण नामादि से युक्त हो ॥२२॥

सर्वेषां वेदसाराणां रहस्यंते प्रकाशितम् ।
एकोदेवो रामचन्द्रो व्रतमन्यं न तत्समम् ॥२३
मंत्रस्त्वेकश्चतन्नाम शास्त्रं तद्धेवतत्स्तुतिः ।
तस्मात्सर्वात्मना रामचन्द्रं भज मनोहरम् ॥२४
येषांतु मानसं रामे लग्नं नेह मनोरमे ।
बंचिता बिधिनापापास्तेवै क्रूरतराश्चाहि ॥२५

हे देवि समस्त वेद सारों का रहस्य हमने तुमसे प्रकाशित किया श्रीरामचन्द्रही एक सर्वोपरि देव हैं उनके समान दूसरा व्रत नहीं है अर्थात् उपासना नहीं है ॥२३॥ श्रीरामजी का नामही एक प्रधान मंत्र है श्रीरामजी की स्तुति ही मुख्य शास्त्र है तस्मात् सर्व प्रकार से श्रीमनोहर श्रीरामचन्द्रजी को भजो ॥२४॥ हे मनोरमे ! इस संसार में आकर जिनका मन श्रीरामजी में संलग्न नहीं हुआ वे क्रूर तर पापी ब्रह्मा से वंचित हैं ॥२५॥

रामं शृण्वन्ति सद्भक्त्या सम्भूताः कथयंति ये ।
श्रूयंते च सुकथ्यन्ते देवैरिन्द्रादि भिस्तु ते ॥२६॥
येषां रामः प्रियो नैव रामेन्यूनत्व दर्शिनाम् ।
द्रष्टव्यं न मुखं तेषां संगतिस्तु कुतस्तराम् ॥२७॥

जो सद्भक्ति से अर्थात् परम प्रेम से श्रीरामजी को श्रवण करते हैं और भक्त वृन्द मिलकर जो श्रीरामजी को कथन करते हैं। इन्द्रादि देवताओं से वे कहे जाते हैं और सुने जाते हैं अर्थात् इन्द्रादि देवता उनकी बड़ाई करते हैं सुनते हैं॥ २६ ॥ जिनको श्रीरामजी प्रिय नहीं हैं और श्रीरामजी में न्यूनत्व देखने वाले हैं उनका मुख भी नहीं देखना चाहिये संगति करना कहां से हो सकेगा ॥२७॥

तत्र प्रमाण माह बाल्मीकीये अयोध्या काण्डे ।
यश्चरामं न पश्येत्तु यंच रामो न पश्यति ।
निन्दितस्सर्व लोकेषु स्वात्माप्येनं विगर्हते ॥२८

श्रीवाल्मीकीय अयोध्या कांडमें कहा है कि जो श्रीरामजी को नहीं देखता है और यह मेरा है इस प्रकार श्रीरामजी जिसको नहीं देखते हैं वह सर्व लोकों में निन्दित होता है उसकी आत्मा भी निन्दा करती है॥ २८॥

अथ श्रीरामे ऐश्वर्य्य प्रतापादि परि पूर्णम्
तत्र प्रमाण माह श्रुतिः ।

ॐ भृगुर्वै वारुणिर्वरुणं पितरमुपससार अधीहि भो भगवो ब्रह्मेति सो ब्रवीद्राम एव परब्रह्म रामादन्यं न किंचन यत्तएते रामादेवोत्पद्यन्ते रामएव विलीयन्ते रामएव स्थितिं लभन्ते तस्माद्राम एव विभुरिति तैत्तरीया श्रुतिः ॥२६॥

तैत्तरीय ब्राह्मण की श्रुति है कि बरुण के पुत्र भृगु अपने पिता बरुण के पास गये और कहा कि हे भगवन् मुझे ब्रह्मोपदेश दीजिये अर्थात् मुझसे ब्रह्म को कहिये कौन परब्रह्म हैं यह सुनकर बरुण बोले कि श्रीरामही परब्रह्म हैं श्रीरामजी से अन्य कुछ भी ब्रह्म नहीं हैं जिस ते चराचर लोकवर्ती प्राणी श्रीरामजीही से उत्पन्न होते हैं श्रीरामजीही में लीन होते हैं मध्य में भी श्रीरामजीही में स्थित हैं तस्मात् श्रीरामजी ही सर्व कारण व्यापक ब्रह्म हैं ॥२९॥

प्रकृत्या सहित श्यामः पीतबासा प्रभाकरः ।
द्विभुजः कुंडलीरत्नमाली धीरो धनुर्धरः ॥३०॥

श्रीरामतापनीयोपनिषद में कहा है कि सर्व कारण रूपा श्रीजानकी जी के सहित श्याम सुन्दर पीतवस्त्र धारण किये सर्व प्रकाशक द्विभुज कुण्डल तथा रत्न मालाके धारण करने वाले परम धीर धनुर्वाण धारी श्रीरामजी परब्रह्म हैं ॥३०॥

यस्यांशे नैव ब्रह्मविष्णु महेश्वरा अपिजाता महाविष्णुर्यस्य दिव्यगुणाश्च स एव कार्य्य कारणयोः परः परमपुरुषो रामो दाशरथिर्वभूव इति श्रुति अथर्वणोत्तरार्द्धं ॥३१॥

अथर्वण के उत्तरार्द्ध में यह श्रुति है कि जिसके अन्शसे ब्रह्मा विष्णु महेश्वर होते हैं महाविष्णु भी जिसके दिव्यगुण हैं वही कार्य्य कारण से पर परम पुरुष श्रीरामजी दशरथ महाराज के पुत्र हुए ॥३१॥

देही देह विभागो नस्यात् सच्चिदानन्द विग्रह इति श्रुतिः ॥३२॥

सच्चिदानन्द विग्रह परब्रह्म में देही देहका विभाग नहीं है ॥३२॥

रामात् संजायते कामः कामाद्विश्वं प्रजायते ।
तस्माद्धनुर्धरात्सर्वे द्विभुजामूलरूपिणः इतिश्रुतिः ॥३३

नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानामेकोबहूनांयो

विदधाति कामान् इति श्रुतिः ॥३४॥

श्रीरामजीसे काम उत्पन्न होता है काम से सब विश्व उत्पन्न होता है तिसी कारण मूल रूपी धनुर्धर श्रीरामजी से उत्पन्न होने से सब मनुष्य द्विभुज होते हैं तात्पर्य्य यह है कि सबके कारण द्विभुज श्रीरामजी हैं इसीसे सब मनुष्य द्विभुज होते हैं ॥३३॥ बहुत से नित्य चेतनों में एक नित्य चेतन परमात्मा सबके मनोरथों को विधान करता है ॥ ३४ ॥

—***—

तत्र प्रमाणमाह आनन्दाख्य संहितायाम् ।

स्थूलमष्ट भुजं प्रोक्तं सूक्ष्मं चैव चतुर्भुजम् ।
परन्तुद्विभुजं रूपं तस्मादेतत् त्रयंयजेत् ॥३५॥

अन्यच्च ।

आनन्दो द्विविधः प्रोक्तोमूर्तश्चामूर्त एव च ।
अमूर्तस्याश्रयो मूर्तः परमात्मा नराकृतिः ॥३६

हरेस्तनुभाः ब्रह्मेति श्रुतिः ।

पंचरात्रान्तर्गत आनन्द संहिता का बचन है कि अष्टभुज भगवान का स्थूल रूप है चतुर्भुज सूक्ष्म रूप है और जो पर रूप है वह द्विभुज है तिसते यथारुचि इन तीनों ही रूपों की उपासना करना चाहिए ॥३५॥ और भी कहा है कि आनन्द दो प्रकार है एक मूर्त एक अमूर्त अर्थात् एक विग्रहवान् और एक विग्रह रहित। परंच मूर्त जो विग्रहवान् हैं उसीके आश्रय से अमूर्त प्रकाश रहता है अतएव परमात्मा नराकृति हैं अर्थात् मनुष्य के सदृश आकार वाला है ॥३६॥

श्रीहरि के शरीर का प्रकाशही व्यापक ब्रह्म है।

———

ब्रह्मांड पुराणेपि ।

सीतायाश्च त्रयोप्यंशाः श्रीभूलीलादि भेदतः ॥३७
श्रीभवेद्रुक्मिणी भूः स्यात्सत्यभामा दृढ़व्रता ।

लीलास्याद्राधिकादेवी सर्वलोकैक पूजिता ॥३८

ब्रह्मांड पुराण में कहा है पराशक्ति रूपा सर्व शक्ति मूल भूता श्रीजानकोजीके भी श्रीभू, लीलादि भेदसे तीन अन्श हैं श्रीरुक्मिणीजी श्रीदेवी हैं दृढ़व्रता सत्यभामाजी भू देवी हैं और सर्वलोक पूजिता श्रीराधिकाजी लीला देवी हैं ॥३८॥

जनकस्य राज्ञः सद्मनि सीतोत्पन्ना ता ॐ सर्व-परांपरा नन्द मूर्ति गायन्ति मुनयोपि देवाश्च कारण कार्याभ्यामेव परा तथैव कारण कार्ये शक्तिर्यस्याः विधात्री गौरीणां सैवकर्त्री सैव रामानन्द स्वरूपिणी जनकस्य योग फलमिव विभाति इत्यथर्वणे उत्त-रार्द्धे श्रुतिः ॥३९॥

अथर्वण के उत्तरार्द्ध में श्रुति का बचन है कि श्रीजनक महाराज के गृह में श्रीसीतानाम्नी पराशक्ति उत्पन्न हुईं तिन्हीं को सबसे पर परानन्द मूर्ति मुनि तथा देवता गान करते हैं यही कार्य्य कारण से पर हैं कार्य्य कारण दोनों इन्हीं की शक्ति है और वही विधात्री तथा श्री और गौरी इन सबों की कर्तृ हैं वही श्रीरामजी के आनन्द रूपा हैं श्रीजनक महाराज का योगका फलही मानो प्रकाशित हो रहा है ॥३९॥

इति श्रीरामचन्द्र स्वरूपं द्विभुजं परात्परंच श्रुति प्रमाणतः सिद्धम् इस प्रकार श्रीरामजी का स्वरूप द्विभुज तथा परात्पर श्रुति प्रमाण से सिद्ध है ।

अथ श्रीराम नाम वर्णनम् ।

तत्र प्रमाणमाह अगस्त्य संहितायाम् ।

बहुधाराम मंत्रोयं संस्कारान्नैव वांछति ।
रसनास्पृक्फलदयेव अग्निरसंस्कृतो यथा ॥४०॥

गुरुवक्त्राद्राममंत्रो यस्य कर्णे प्रवेशकृत् ।
शुद्धः स वैष्णवो ज्ञेयः वेदास्सर्वे वदन्तिहि ॥४१

अब श्रीराम नामका वर्णन करते हैं तिसमें श्रीअगस्त्य संहिताका प्रमाण है कि प्रायः करके यह श्रीराम मंत्र अन्य बहुत संस्कारों की अपेक्षा नहीं रखता है किन्तु रसना के स्पर्श मात्रसे फलित होता है जैसे बिना किसी संस्कार से युक्त भी अग्नि जलाने में समर्थ है ॥४०॥ श्रीगुरु मुखसे श्रीराम मंत्र जिसके कर्ण में प्रवेश करता है उसीको शुद्ध वैष्णव जानना चाहिए यह सब वेद कहते हैं ॥४१॥

—***—

अगस्त्य संहितायाम् ।

सर्वेषु मंत्र वर्गेषु श्रेष्ठं वैष्णवमुच्यते ।
गाणपत्येषु शैवेषु शाक्त सौरेष्वभीष्टदम् ॥४२॥
वैष्णवेष्वपि मंत्रेषु राममंत्राः फलाधिकाः ।
विनैव दीक्षां विप्रेन्द्र पुरश्चर्यां विनैवहि ॥४३॥
विनैवन्यास विधिना जपमात्रेण सिद्धिदाः ।
मंत्रराजइतिप्रोक्तः सर्वेषामुत्तमोत्तमः ॥४४॥
दैन्यं दिनन्तु दुरितं पक्ष मासर्तुवर्षजम् ।
सर्वंदहति निश्शेषं तूलाचल मिवानलः ॥४५॥
ब्रह्महत्या सहस्राणि ज्ञानाज्ञान कृतानि च ।
स्वर्णस्तेय सुरापान गुरुतल्पायुतानि च ॥४६॥
कोटि कोटि सहस्राणिह्युपपापानि यान्यपि ।
सर्वाण्यपि प्रणश्यन्ति राममंत्रानुकीर्तनात् ॥४७

श्रीअगस्त्य संहिता में और भी कहा है कि समस्त मंत्र वर्गों में विष्णु भगवान के मंत्र श्रेष्ठ कहे गये हैं गणपति, शिव, शक्ति सूर्यादि

के मंत्रों में वैष्णव मंत्रही अभीष्ट देने वाला है ॥४२॥ और समस्त विष्णु मंत्रों में भी श्रीरामजी के मंत्र अधिक फल देने वाले हैं हे विप्रेन्द्र! बिना दीक्षाके तथा बिना पुरश्चर्य्या के ॥४३॥ बिना न्यास विधि के जप मात्रसे सिद्धि देने वाले श्रीरामजी के मंत्र हैं और समस्त श्रीराम-मंत्रों में यह षडक्षर मंत्र मंत्रराज कहा गया है और सर्व मंत्रों से उत्त-मोत्तम है ॥४४॥ दिन दिन का पाप तथा एक पक्षका पाप एक महीना का पाप एक वर्षका पाप इत्यादि सर्व पापों को निश्शेष करके यह मंत्र जला देता है जैसे रूई के पहाड़ को अग्नि जलाय दे ॥४५॥ ज्ञान अज्ञान पूर्वक किये हुये ब्रह्म हत्यादिक हज़ारहों पाप तथा स्वर्ण की चोरी मदिरापान गुरुतल्पगमन ॥ ४६ ॥ ऐसे ऐसे कोटि कोटि हजार पातक तथा उपपातक जितने हैं वे सब श्रीराम मंत्रके जप करने से सर्वथा नाश को प्राप्त हो जाते हैं ॥४७॥ —***—

श्रीरामतापनीये ।

य एतत् तारकं ब्राह्मणोनित्यमधीते सपाप्मानं तरति स मृत्युं तरति सभ्रूणहत्यां तरति स सर्व हत्यां तरति स संसारंतरति स विमुक्ताश्रितोभवति सो मृतत्वंच गच्छतीति श्रुतिः ॥४८॥

प्रणवं केवलमाकारो काराकार मर्द्ध मात्रा सहितं तस्मात्प्रणवस्य चाकारस्य चोकारस्य च मकारस्य चार्द्ध मात्रस्य च इति श्रुतिः ॥४९॥

श्रीमद्रामतापनीयोपनिषद में लिखा है कि जो ब्राह्मण अर्थात् ब्रह्म जानने वाला इस तारक षडक्षर मंत्रको नित्य जपता है वह सब पापों से तर जाता है वह मृत्यु को तर जाता है वह बाल हत्याको तर जाता है वह सर्व हत्याको तर जाता है वह संसार को तर जाता है अर्थात् सबको उल्लंघन कर जाता है वह विमुक्त रूप परमात्मा के आश्रित हो जाता है वह अमृतत्व मोक्षको प्राप्त होता है ॥४८॥

प्रणव केवल अकार उकार मकार तथा अर्द्ध मात्रा सहित है तस्मात् प्रणव के अकार का उकार का मकार का तथा अर्द्ध मात्राका

कारण श्रीराम नामही है ॥४९॥

आकारः प्रथमाक्षरोभवति उकारो द्वितीयाक्षरोभवति मकारस्तृतीयाक्षरोभवति अर्द्धमात्रा चतुर्थाक्षरोभवति विन्दुः पंचमाक्षरोभवति नादः षष्ठाक्षरो भवति तारकत्वात्तारको भवति तदेवतारकं ब्रह्मत्वं विद्धातिश्रुतिः ॥५०॥

प्रणव में आकार प्रथमाक्षर है उकार द्वितीयाक्षर है मकार तृतीयाक्षर है अर्द्ध मात्रा चतुर्थाक्षर है बिन्दु पंचमाक्षर है नाद षष्ठाक्षर है तारक होने के कारण यह भी तारक कहा जाता है इस कारण इसी षडक्षर मंत्रको तुम तारक ब्रह्म जानो ॥५०॥

अकाराक्षरसम्भूतः सौमित्रिर्विश्वभावनः ।
उकाराक्षर सम्भूतः शत्रुघ्नस्तैजसात्मकः ॥५१॥
प्राज्ञात्मकस्तु भरतो मकाराक्षर संभवः ।
अर्द्धमात्रात्कोरामो ब्रह्मानन्दैक विग्रहः इतिश्रुतिः ॥५२

विश्व भावन अर्थात् जागृत अवस्थाके साक्षी विश्वरूप सौमित्रि श्रीलक्ष्मणजी अकाराक्षर सम्भूत हैं अर्थात् प्रणव गत अकाराक्षर श्रीलक्ष्मणजी का प्रतिपादक है इसी तरह स्वप्नावस्था साक्षी तैजस रूप श्रीशत्रुहनजी उकाराक्षर प्रतिपाद्य हैं ॥५१॥ सुषुप्ति अवस्था साक्षी प्राज्ञ रूप श्रीभरतजी मकाराक्षर प्रतिपाद्य हैं ब्रह्मानन्दैकविग्रह श्रीरामजी अर्द्ध मात्रात्मक हैं अर्थात् अर्द्ध मात्रा प्रतिपाद्य हैं ॥५२॥

--***--

तत्र प्रमाण श्रीमन्महारामायणे शिव वाक्यं, पार्वतीं प्रति ।

निश्चलं मानसं कृत्वा सावधानाश्शृणुप्रिये ।
गुह्याद्गुह्य तरं तत्वं वक्ष्येमृतमयं मुदा ॥५३॥

रामनाम महा विद्ये षडभिर्वस्तुभिरावृतम् ।
ब्रह्मजीव महानादै स्तृभिरन्यद्वद्यामिते ॥५४॥
स्वरेणाविन्दुना चैव दिव्यया माययापि च ।
प्रथक्त्वेना विभोगन साम्प्रतं शृणु पार्वति ॥५५॥
परव्रह्म मयो रेफो जीवोकारश्च मस्यय: ।
रस्याकारमयोनाद: शयादीर्घास्वरामता ॥५६॥
मकारंव्यंजनंविन्दु हैंतु: प्रणवमाययो: ।
अर्द्धभागादुकारस्या दकारान्नाद रूपिण: ॥५७॥

श्रीमहारामायण में श्रीशिवजी का बचन श्रीपार्वतीजी से है कि हे प्रिये निश्चल मनकर सावधान होकर सुनो मैं तुमसे गुह्य से गुह्य तर अमृतमय तत्व कहूँगा ॥५३॥ हे महाविद्ये श्रीराम नाम छ बस्तुओं से आवृत है ब्रह्म जीव और महा नाद और भी तीन मैं तुमसे कहता हूँ ॥५४॥ स्वर, विन्दु तथा दिव्य माया ये छः बस्तु श्रीराम नाम में हैं अब पृथक बिभाग से कहता हूँ आप सुनो ५५ रेफ परव्रह्म मय है मकार का अकार जीवरूप है रकार का अकार नाद मय है और रकार में दीर्घ अकार सर्व स्वर रूप है ॥५६॥ मकार जो व्यंजन है और और बिन्दु ये प्रणव व माया के कारण हैं नाद रूपी अकार में जो अर्द्ध मात्रा रकार वह उकार रूप हो जाता है ॥५७॥

रकार गुरु राकारस्तथा वर्ण विपर्जय: ।
मकारं व्यंजनं चैव प्रणवंचाभिधीयते ॥५८॥
मस्या सवर्णितंमत्वा प्रणवे नाद रूप धृक ।
अंतर्भूतोभवेद्रेफः प्रणवे सिद्धि रूपिणी ॥५९॥
रामनाम्नः समुत्पन्नः प्रणवोमोक्ष दायकः ।
रूपं तत्वमसेश्चासौ वेदतत्वाधिकारिण: ॥६०॥

रकार में जो दीर्घाकार है वह वर्ण विपर्यय होकर अकार उकार दोनों मिलकर ओंकार होता है और मकार व्यंजन युक्त होने से ओम् वह प्रणव होता है ॥५८॥ मकार के असवर्ण होने से नाद रूप धारण कर सिद्ध रूपी प्रणव में रेफ अन्तर्भूत हो जाता है ॥५९॥ इस प्रकार मोक्ष दायक प्रणव श्रीराम नामही से उत्पन्न होता है वेद तत्वाधिकारी तत्वमसी का रूप भी इसी श्रीरामनाम से होता है ॥६०॥

रकारस्तद पदो ज्ञेयस्त्वं पदोकारउच्यते ।
मकारो सिपदं खंवजं तत्वमासि सुलोचने ॥६१॥
ब्रह्मेति तत्पदं विद्धित्वंपदं जीव निर्मलः ।
ईश्वरोसिपदंप्रोक्तं ततो माया प्रवर्तते ॥६२॥
वेद सारं महा वाक्यं यत्तत्वमसि कथ्यते ।
रामनाम्नश्चतत्सर्वं रमुक्रीड़ा प्रवर्तते ॥६३॥

रकार को तत्पद जानो उकार को त्वंपदं जानो मकार को असि पद जानो हे सुलोचने इस प्रकार से तत्वमसि यह वाक्य होता है ॥६१॥ तत्पद का अर्थ है ब्रह्म और त्वं पदका अर्थ निर्मल जीव और असि पदार्थ ईश्वर है इन्हीं से माया प्रवृत होती है ॥६२॥ इस प्रकार वेद सार यह तत्वमसि वाक्य कहा जाता है वह सर्व श्रीराम नामसे उत्पन्न होता है इसी हेतु से रमुक्रीड़ा धातु श्रीराम नामही में अन्वय को प्राप्त है ॥६३॥

विज्ञानस्थो रकारस्यादकारो रामरूपकः ।
मकारः परमाभक्ती रमुक्रीड़ोच्यतेततः ॥६४॥
चिद्वाचकोरकास्यात्सद्वाच्याकार उच्यते ।
मकारानन्दकं वाच्यं सच्चिदानन्द मव्ययम् ॥६५
व्यञ्जनाच्चक्षरोत्पत्ती रकाराद्ब्रह्म चाक्षरं ।
रेफो निरक्षरं ब्रह्म सर्व व्यापी निरंजनः ॥६६॥

इच्छाभूतोक्षरस्तस्य चाक्षरस्तेज उच्यते ।
निरक्षरो घनस्तेजो वर्तते जानकीपतेः ॥६७॥

रकार बिज्ञानस्थ है अर्थात् विज्ञान का रूप है और अकार ज्ञान स्वरूप है तथा मकार परमाभक्ति स्वरूप है इसीसे रमुक्रीड़ा का अर्थ श्रीराम नामही में है ॥६४॥ रकार चिद्वाचक है अकार सद्वाचक है और मकार आनन्द वाचक है इसीसे अव्यय सच्चिदानन्द श्रीरामनाम ही है ॥६५॥ व्यंजन मकार से क्षर की उत्पत्ति है अकार अक्षर ब्रह्म है सर्व व्यापी निरंजन रेफ निरक्षर ब्रह्म रूप है ॥६६॥ क्षरतत्व श्रीरामजी का इच्छा भूत है अक्षर तत्व उनका तेज है और निरक्षर ब्रह्म घन स्तेज है यह सब श्रीजानकीपति ही से प्रवृत्त होता है ॥६७॥

स्वयं निरक्षरातीतो रामएव इति श्रुतिः ।
ब्रह्मज्ञान निमग्ना ये भजंति सनकादयः ॥६८॥
रकारोनलवीजंस्यात् ये सर्वे वाड़वादयः ।
कृत्वामनोमलंसर्वं भस्म कर्म शुभाशुभम् ॥६९॥
अकारो भानुवीजंस्यात् वेद शास्त्र प्रकाशकः ।
नाशयत्येव सद्दीप्त्या या विद्याहृदये तमः ॥७०॥
मकारश्चन्द्र वीजं च सद्दीप्ति परि पूरणम् ।
त्रितापंहरते नित्यं शीतलत्वं करोति च ॥७१॥

श्रीरामजी स्वयं निरक्षरातीत हैं यह श्रुति कहती है इसीसे ब्रह्म ज्ञानमें निमग्न सनकादिक श्रीरामही जी को भजते हैं ॥६८॥ रकार अनल बीज है जो सब बड़वानलादिक हैं इसी हेतु से शुभाशुभ कर्म तथा मनके मलको भस्मकर जीव को श्रीरामजी के योग्य कर देता है ॥६९॥ वेद शास्त्र प्रकाशक अकार भानु बीज है अपनी सद्दीप्ति से हृदय का तम जो अविद्या है उसको नाश करता है ॥७०॥ मकार रस्यता पूर्णचन्द्र बीज है जो नित्य तीनों ताप को हरकर शीतल करता है ॥७१॥

रकारोमूर्द्धि संचारस्त्रिकुट्याकार उच्यते ।
मकारोधर्रयोर्मध्ये लोमेलोमे प्रतिष्ठितः ॥७२॥
रकारो योगिनां ध्येयो गच्छन्ति परमं पदम् ।
अकारो ज्ञानिनां ध्येयस्तेसर्वे मोक्षरूपिणः ॥७३॥
पूर्णनाम मुदादासा ध्यायंत्यचल मानसाः ।
प्राप्नुवन्ति परां भक्तिं श्रीरामस्य समीपकम् ॥७४
नारायणादि नामानि कीर्तितानि बहून्यपि ।
सम्यग्भ गवतस्तेषु रामनाम प्रकाशकम् ॥७५॥

रकार का संचार मूर्द्धा में है अकार का त्रिकुटी में है और मकार दोनों ओष्ठ के मध्य में है इस तरह श्रीराम नाम प्रत्येक रोम रोम में प्रतिष्ठित है ॥७२॥ रकार योगियों का ध्येय है जिसके प्रभाव से वे परम-पद को जाते हैं और अकार ज्ञानियों का ध्येय है जिससे वे मोक्ष रूपी हो जाते हैं ॥७३॥ दास लोग अचल मन होकर पूर्ण नामको आनन्द से ध्यान करते हैं जिससे वे परा भक्ति को तथा श्रीरामजी की समीपता को प्राप्त होते है ॥७४॥ भगवान के श्रीनारायणादि नाम सम्यक् प्रकार से कीर्तित हैं पर तिन सबों का प्रकाशक श्रीराम नाम है ॥७५॥

अन्यच्च ।

पठित सकल वेदः शास्त्रपारंगतोवा यमनियमपरोवा धर्म शास्त्रार्थकृद्वा अपितु सकलतीर्थ व्राजको वाहिताग्निर्नहि हृदियदि रामः सर्वमेतद्वृथा-स्यात् ॥७६॥

नाराधितो यदिहरिस्तपसा ततः किं ।
आराधितो यदिहरिस्तपसा ततः किं ॥

नान्तर्वहि यदि हरिस्तपसा ततः किं ।
अन्तर्वहि यदि हरिस्तपसा ततः किम् ॥७७॥

सकल वेदों को भी पढ़ चुका हो शास्त्रों के पार को भी चला गया हो यम नियम में परायण भी है धर्म में शास्त्रार्थ का भी करने वाला है और समस्त तीर्थों को भी कर आया हो आहितानि भी क्यों न हो पर यदि हृदय में श्रीरामजी नहीं है तो यह सब व्यर्थ है ॥७६॥ श्रीहरि का आराधन यदि नहीं किया तो उसे तपसे क्या लाभ है यदि श्रीहरि आराधन कर चुका है तो उसको तपसे क्या प्रयोजन है भीतर बाहर यदि हरि को नहीं देखता है तो उसको तपसे क्या हो सकता है और भीतर बाहर यदि हरि को देखता है तो उसका तपसे क्या प्रयोजन है ॥७७॥

———

सत्योपाख्याने सूत वाक्यं ।

लोकेभवतुचाश्चर्यं जलाज्जन्म घृतस्य च ।
सिकतायाश्चतैलं तु यत्नैर्यातु कथंचन ॥७८॥
विनाभक्तिं न मुक्तिश्च भुजमुत्थाय चोच्यते ।
यूयंधन्या महाभागा येषां प्रीतिस्तु राघवे ॥७९॥

इत्यादिभ्यो श्रीरामनाम्नि वैराग्य योग ज्ञान भक्ति परि पूर्णता दर्शिता ।

सत्योपाख्यान में श्रीसूतजी का बचन ऋषियों से है कि लोक में जलसे घृत पैदा होय तथा बालू से यत्न से तैल निकल भी सके ॥७८॥ यह आश्चर्य हो जाय पर बिना भक्ति के मुक्ति नहीं होती है यह भुजा उठा कर मैं कह रहा हूँ इससे हे महाभाग महर्षियो आप धन्य हो कि जिनकी प्रीति श्रीराघव में है ॥७९॥ इस तरह श्रीराम नाम में वैराग्य योग ज्ञान भक्ति की परिपूर्णता दिखलाई ।

———

अथ यजुर्वेदे ब्रह्मणो वाक्यम् ।

अहोयक्षत सत्रं परिदधासि वशिष्ठत्वं पुरोधासि

त्वामेव ब्रह्मोद्भवं परि पश्यन्तुधीराः अनन्यमनसा चिन्तयंतुदेवाः स्वर्गेषुयज्ञाया प्यायतां धियः कौशिके न समर्थं प्रविलीयतां देवाः विरसि चारुरसि तूर्यं मंगलायतां एष ब्राह्मणोवशिष्ठः अस्य प्रयोजनाय यज्ञाय भानुवंश्य कृतोद्भवः आचरणाय कर्मणोस्य अप्रमेयानि कर्माणि नाहं बभूव एषस्तु ज्ञेयः सनीचैस्तन्नोगृह्णातिकाले काले मंगलाय परिपूर्णाद्ब्रह्मलोकादिहागतः पूज्यमानाः सन्तु आपः सुमनस्य मनोभवः देवर्षयः गच्छन्तु पुरे मंगलमास्तात् चिन्मयोः सम्मेलनं विधिः संगीयतां ॥८०॥

यजुर्वेद में श्रीब्रह्माजी का बचन है कि हे ऋषियो आप सब वर-वधू को परस्पर दान करो अर्थात् वरका संबंध बधू से और बधूका संबंध वरसे देव और हे बशिष्ठजी आप सूर्य्य बंश के पुरोहित हैं वर बधू के सुखमें विघ्न करने वालों के नाशके वास्ते यज्ञांग सत्रको कर चुके हो क्योंकि धीर लोग आपको ब्रह्मोद्भव समझते हैं हे देवगणो आप इस कर्ममें पूजित होकर वर वधूके मंगल को चिंतवन करो और पर पदके प्राप्ति के लिये यज्ञके द्वारा बुद्धि बृत्ति को बढ़ाओ और हे देवो श्रीविश्वामित्रजी के तेज से सब बिघ्न नाश हो जावैं। हे वर तुम सर्व गतिवान् हो और पवित्र हो तूर्यादि बाजा तुम्हारे विवाह के मंगलार्थ होवैं तथा प्रधान कर्म इस यज्ञमें सदा स्थिर रहैं ॥८०॥

देवानां पूरयोध्या तस्यां हिरणमयः कोशः स्वर्गोलोकोज्योतिषावृतः यो वैतां ब्रह्मणो वेदामृतेनावृतांपुरीं तस्मै ब्रह्म च ब्रह्मा च आयुः कीर्तिं प्रजांददुरिति सामवेदे तैत्तरीया श्रुतिः ॥८१॥

दिव्य ज्ञानशाली देव अर्थात् मुक्तजीवों की पुरी अयोध्या है तिसमें सुवर्णमय कोश है जिसके ज्योति से वह स्वर्ग पद वाच्य दिव्यलोक अच्छादित है परब्रह्म की उस अमृत से आच्छादितपुरी को जो जानता है उसके लिए ब्रह्मा तथा परब्रह्म आयुकीर्ति प्रजा आदि सुखों को देते हैं यह सामवेद की तैत्तरीया श्रुति है ॥८१॥

--***--

पद्म पुराणे शिव वाक्यम् ।

विष्णोः पादमवन्तिकां गुणवतींमध्ये च कांचींपुरीं
नाभौ द्वारवतीं तथा च हृदये मायापुरीं पुण्यदां।
ग्रीवामूल मुदाहरंति मथुरां नासाग्र वाराणसी
मेतद्ब्रह्मपदंवदन्ति मुनयोऽयोध्यापुरीं मस्तके ॥८२

पद्म पुराणान्तर्गत अयोध्या माहात्म्य में श्रीशिवजी का बचन है कि सर्व व्यापक परब्रह्म का उज्जैनपुरी चरण है गुणवती कांचीपुरी मध्य भाग है द्वारवती अर्थात् द्वारका नाभि है हृदय में मायापुरी हरिद्वार अथवा श्रीनगर है मथुराग्रीवा का मूल है वाराणसी काशी नाशिका का अग्र भाग है यह ब्रह्म का स्वरूप तीर्थ रूप मुनिवृन्द कहते हैं और अयोध्यापुरी सबका मस्तक है अर्थात् सबसे उच्च है ॥८२॥

मथुराद्याः सर्व पुर्य्योंह्ययोध्यापुर दासिकाः ।
अयोध्यामेव सेवन्ते प्रलये प्रलयेपि च ॥८३॥
अयोध्यावासिनस्सर्वे जगन्नाथस्यमूर्तयः ।
ईश्वरेणपुरा प्रोक्तं पार्वत्यै च कदाचन ॥८४॥
सरयू तमसयोर्मध्ये धवलग्राममन्तरे ।
अमरामरणमिच्छन्ति का कथा इतरेजनाः ॥८५॥

मथुरादि समस्तपुरी श्रीअयोध्य की दासी है प्रलय प्रलयमें श्रीअयोध्या का सेवन करती हैं इसी कारण सर्व अयोध्या बासी श्रीजगन्नाथ

मूर्ति हैं यह किसी समय में श्रीशिवजीने श्रीपार्वतीजी से कहा है ॥८४॥ सरयू तमसा के बीचमें धवल ग्राम पर्य्यन्त यहां पर अमर गण अपना मरना चाहते हैं इतर जनों को कहना ही क्या है ॥८५॥

मन्वन्तरसहस्त्रेषु काशी वासे न यत्फलम् ।
तत्फलं समवाप्नोति सरयू दर्शने कृते ॥८६॥
प्रयागेयो नरोगत्वा माघानां द्वादशं वसेत् ।
तत्फलादधिकं प्रोक्तं सरयू दर्शने कृते ॥८७॥
मथुरायां कल्पमेकं वसते मानवो यदि ।
तत्फलादधिकं प्रोक्तं सरयू दर्शने कृते ॥८८॥
गयाश्राद्धे न यत्पुण्यं पुरुषोत्तम दर्शने ।
तत्फलादधिकं प्रोक्तं सरयू दर्शने कृते ॥८९॥
पुष्करेषु नरो याति कार्तिक्यां कृत्तिकायुते ।
तत्फलादधिकं प्रोक्तं सरयू दर्शने कृते ॥९०॥
वस्तव्यं सरयू तीरे नीरेणोदर पूरणम् ।
कदाचित्प्राप्यते शार्कं का कथा पाकशासने ॥९१॥

हजार मन्वन्तर काशी में बसने से जो फल होता है वह फल श्रीसरयू के दर्शन करने ही से प्राप्त होता हैं ॥८६॥ जो नर जाकर प्रयाग में बारह माघ कल्पवास करता है उस फल से अधिक श्रीसरयूजी के दर्शन करने से होता है ॥८७॥ यदि मनुष्य एक कल्प मथुरा में बसे उस फलसे अधिक फल श्रीसरयूजी के दर्शन से होता है ॥८८॥ गया में श्राद्ध करने से तथा पुरुषोत्तम के दर्शन करने से जो फल होता है उससे अधिक फल श्रीसरयूजी के दर्शन से कहा गया है ॥८९॥ कृत्तिका युक्त कातिकी पूर्णमासी के समय जो नर पुष्कर में जाता है उस फल से अधिक फल श्रीसरयूजी के दर्शन में कहा गया है ॥९०॥ तस्मात् श्रीसरयू तीर में सदा बसे और उन्हीं के जलसे अपने उदर को पूर्ण

करे यदि दैव योग से कभी शाक मिल जाय उस संतोष के सामने इन्द्र क्या चीज है ॥९१॥ —***—

तत्र प्रमाणमाह श्रुतिः ।

प्रवाह रूपेण भवतिनाम्ना सरयू अहमेवात्र मनसा
जलरूपेण चतुर्युगे च सरयू कलौगंगा वशिष्ठजा ॥९२

प्रबाह रूपसे श्रीसरयू नामसे जल रूप मनसे हमही होते हैं ऐसा भगवान ने कहा है चारो युगमें श्रीसरयू प्रसिद्ध हैं तथापि कलियुग में विशेषतः बशिष्ठजा गंगाही अर्थात् श्रीसरयू ही पवित्र करने वाली हैं ॥९२॥

—***—

पाद्मे ।

षष्ठिवर्ष सहस्राणि काशी वासे न यत्फलम् ।
तत्फलं निमिषार्द्धेण कलौ दाशरथेः पुरी ॥९३॥

अन्यच्च ।

यस्यां भाति प्रमोदकाननवरं रामस्यलालीस्पदम् ।
यत्र श्रीसरितांवरा च सरयू रत्नाचलः शोभते ॥
ध्येया ब्रह्म महेश विष्णुमुनिभिर्यानन्ददा सर्वदा ।
सायोध्यापरमात्मनो विजयतेधाम्नां परामुक्तिदा॥९४

पद्म पुराणान्तर्गत श्रीअयोध्या माहात्म्य में लिखा है कि साठहज़ार वर्ष काशी में बसने से जो फल होता है वह फल कलियुग में श्रीरामजी की पुरी श्रीअयोध्याजी में आधा निमेष बसने से देती है ॥९३॥ और भी कहा है कि जिसमें सब बनों में श्रेष्ठ श्रीप्रमोदबन प्रकाशित है जो कि श्रीरामजी के लीला का स्थान और जहां पर सब पुण्य नदियों में श्रेष्ठ श्रीसरयूजी हैं तथा रत्नाचल अर्थात् मणिपर्वत शोभित है और जो पुरी ब्रह्मा, महेश, विष्णु और मुनि बृन्दों से सदा ध्येय तथा आनन्द दात्री है वह मुक्ति देने वाली परमात्मा की सब धामों से परा श्रीअयोध्या नाम से प्रसिद्ध पुरी है ॥९४॥

* पद *

सब ताजि अवधपुरी रहिये ॥ टेक ॥
रामरूप हिय राम नाम मुख कर सेवा गहिये ।
मज्जन पान सदा सरयू को समदुख सुख सहिये ॥१
जहँतहँ रामचरित सुनिये नितसहज सुखहिंलहिये ।
श्रीरामचरण रघुबीरकृपाते कछुफलनहिंचहिये ॥६५

इति श्रीराम-नवरत्न सार संग्रहे श्रीराम लीला रूप नाम धाम सर्वोपरि वर्णननाम षष्ठंरत्नम् ।

—***—

* दोहा *

सुत कलत्र धन धाम तन, मान सुजस जगबंध ।
रामचरन यह सात में, नेह करहिं ते अंध ॥१॥

अब सातवें रत्नमें श्रीकरुणासिंधुजी महाराज पुत्र, स्त्री, धन गृहादिक, शरीर लोक मान्यता तथा सुयश ये सब जगत के बंधन हैं इन सातों में जो स्नेह करते हैं वे अन्धे हैं इस बातको दिखलावैंगे ॥१॥

—***—

तत्र प्रमाण माह अध्यात्म्ये ।
यथामेघ वितानस्था विद्युल्लेखाति चंचला ।
आयुरप्यग्नि सन्तप्त लोहस्थ जल विन्दुवत् ॥२
आरण्य काण्डे सुतीक्ष्ण वाक्यम् ।
मामद्य सर्व जगता मविगोचरस्त्वं ।
त्वन्मायया सुत कलत्र गृहांध कूपे ॥

मग्नं निरीक्ष्य मल मुदगल पिंड मोह ।
पाशानुवद्ध हृदयं स्वयमागतोसि ॥३॥

तहाँ पर श्रीअध्यात्म रामायण में प्रमाण है कि जैसे मेघके वितान में स्थित बिजुली की रेखा अति चंचल होती है उसी तरह अग्नि से संतप्त लोह में छोड़े हुए जल विन्दु के समान आयु भी अति चंचल है आरण्य कांडमें श्रीसुतीक्ष्णजी का भी बचन है कि हे प्रभो आपकी माया से पुत्र कलत्र गृह रूपी अन्ध कूपमें मग्न तथा मलका पिंड जो शरीर उसमें मोह के पाशसे बँधे हुए हृदय वाले मेरे को देखकर सकल जगत को गोचर न होने वाले आप स्वयं प्राप्त हुए हैं ॥३॥

—***—

किष्किन्धा कांडे श्रीरामचन्द्र वाक्यं तारां प्रति।

मिथ्यारोपितसंसारो न स्वयं विनिवर्तते ।
विषयान्ध्यायमानस्य स्वप्नेमिथ्यागमोयथा ॥४॥

स्वयं प्रभोवाच ।

अदर्शनं भवार्णानां सन्मार्ग परिदर्शनम् ।
धन पुत्र कलत्रादि विभूति परिदर्पितः ॥५॥
अकिंचन धनंत्वाद्य नाभि धातुं जनोर्हति ।
निवृत्ति गुण मार्गाय निःकिंष्चनधनायते ॥६॥

किष्किन्धा कांडमें श्रीरामजी का बचन तारा से है कि यद्यपि संसार मिथ्यारोपित है तथापि विषयों को ध्यान करने वाले को निवृत्त नहीं होता है जैसे स्वप्न में मिथ्या प्रतीति बिना जागे नहीं निवृत्ति होती ॥४॥ स्वयंप्रभा ने भी कहा है कि आपके भक्तों को संसार का दर्शन नहीं होता है किन्तु वे सन्मार्ग ही को देखते हैं और जो धन पुत्र कलत्रादि विभूति से दर्पित है ॥५॥ वह अकिंचन धन आपके नाम को भी नहीं ले सकता है निवृत्त गुण मार्ग वाले विरक्तों के धन आपको मेरा नमस्कार है ॥६॥

तत्र प्रमाण श्रीमद्भागवते ।

रायः कलत्रं पशवः सुतादयो गृहामही कुंजर कोश भूतयः। सर्वेर्थ कामाः क्षणभंगुरायुषः कुर्वन्ति मर्त्यस्यकियत् प्रियं चलाः ॥७॥

संसार कूपे पतितं विषयैर्मुषितेक्षणम् ।
ग्रस्तं कालाहि नात्मानं कोन्यस्त्रातुमिहेश्वरः ॥८॥

श्रीमद्भागवत में कहा है कि धन, स्त्री. पशु, पुत्रादिक तथा ऊँचे ऊँचे गृह पृथ्वी हाथी खज़ाना यह सब विभूति तथा अन्य सब भोग क्षण मात्रमें विनाश होने वाली आयु वाले मनुष्य को क्या प्रिय कर सकते हैं क्योंकि विषय सुख चंचल है ॥७॥ संसार कूप में पड़े हुए विषयों से ज्ञान दृष्टि नाश हो गई है जिसकी वह काल रूपी सर्पके मुखसे अपनी रक्षाको करने में कब समर्थ हो सकता है ॥८॥

—***—

तत्र प्रमाण भर्तृहरौ ।

धन्यानांगिरि कन्दरेषुवसतां ज्योतिः परं ध्यायता मानन्दाश्रु कणान्पिबन्ति शकुनाः निश्शंकमंकेशयाः अस्माकन्तु मनोरथो परचितेप्रासादावापीतटे क्रीड़ा कानन केलि कौतुक युषामायुः परंक्षीयते ॥९

भोगेरोग भयं कुलेच्युतिमयं वित्तेनृपालाद्भयं ।
माने दैन्यमयं वलेरिपु भयं रूपे जराया भयं ॥
शास्त्रेवादि भयं गुणेनातिभयंकाये कृतान्ताद्भयं ।
सर्ववस्तु भयावहं भुविनृणां वैराग्यमेवाभयम् ॥१०

भर्तृ हरि सतकमें कहा है कि गिरि कन्दराओं में बसकर परब्रह्म की ज्योति को ध्यान करते हुए धन्य पुरुषों के अङ्कमें बैठकर उनके आनन्दाश्रुकणोंको पक्षिगण निश्शंक पान करते हैं और मनोरथके बनाये हुए प्रासादवावली आदि के तटमें क्रीड़ा कानन में केलि कौतुक करने वाले हम सबों की आयु व्यर्थ ही क्षीण होती है ॥९॥ भोगमें रोगका भय है कुलमें गिर जाने का भय है धनमें राजा से भय है मान में दीनता का भय है बलमें शत्रुका भय है रूपमें वृद्धावस्था का भय है शास्त्र में वादी का भय है गुण में नम्र होने का भय है शरीर में काल से भय होता है इससे पृथ्वी में मनुष्यों को सब बस्तु भय देने वाला है एक वैराग्य ही अभय दाता है ॥१०॥

आसानाममनदीमनोरथ जला तृष्णा तरंगाकुला
रागग्राहवती वितर्क विहगा धैर्य्यद्रुम ध्वंशिनी ॥
मोहावर्त सुदुस्तराति गहनाप्रोत्तुगं चिन्तातटी ।
तस्याः पारगताविशुद्धमनसोनन्दन्तियोगीश्वराः ॥११
कौपीनं शतखंड जर्जरतरं कंथापुनस्तादृशी ।
नैश्चिन्त्यं निरपेक्ष भैक्षमसनं निद्रास्मशाने वने ॥
स्वातंत्रेन निरंकुशंविहरणं स्वान्तं प्रशान्तंसदा ।
स्थैर्य्ययोगमिदंभवेद्यदितदा त्रैलोक्यराज्येनकिम् ॥१२

मनोरथ रूपी जलसे भरी तृष्णा तरंगों से आकुल राग रूपी मगर वाली वितर्क रूपी पक्षियों से युक्त धैर्य्य रूपी वृक्षों को ध्वंश करने वाली मोह रूप आवर्त से दुस्तर अति गहन चिन्ता रूपी ऊँचे तटों से युक्त तिस आसा नदी के पार पहुँचे हुए विशुद्ध मन वाले योगीश्वर आनन्द पाते हैं ॥११॥ जिनका कोपीन सौ टुकड़े वाला जर्जर तर हो रहा है और गुदड़ी भी वैसी ही है पर निश्चिन्त हुए निर्पेक्षभिक्षाका भोजन कर स्मशान बनमें सोने वाले स्वतन्त्रता से निरंकुश बिहार करते हुए जिनका मन सदा प्रशान्त हो रहा है यदि इस प्रकार धैर्य्य रूपी योग प्राप्त हो जावे तो त्रैलोक्य के राज्य से क्या सुख है ॥१२॥

अन्यच्च ।

आसायाश्चैव येदासास्ते दासाजगतामपि ।
आसांदासीकृतायेन तस्यदासायते जगत् ॥१३॥
प्रतिष्ठाशूकरीविष्ठा गौरवं शुद्ध रौरवम् ।
अतिमानं सुरापानं त्रयंत्यक्त्वा सुखीनरः ॥१४॥
पतंगमातंग कुरंग भृंगा मीनाहतापंचभिरेवपंच ।
एकः प्रमादीसकथंनहन्यतेयः सेवितेपंचभिरेवपंच ॥१५

—***—

इति वैराग्य वर्णनम् ।

और भी कहा है कि जो आसा के दास हैं वे जगत भरके दास होते हैं जिसने आसा को दासी बना लिया सब जगत उसके सामने दास का आचरण करता है ॥१३॥ प्रतिष्ठा शूकर की विष्ठा है गौरव भी शुद्ध रौरव जानो अति मान मदिरा का पान है इन तीनों को छोड़ कर पुरुष सुखी होता है ॥१४॥ पतंग, हाथी, मृग, भँवरा, मछली ये पांच एक एक विषय से नष्ट होते हैं पतंग रूप से, मातंग स्पर्श से, कुरंग शब्द से, भृंग गन्ध से और मीन रससे विनाश होते हैं और जो एकही प्रमादी पांच इन्द्रियों से पंच विषय का सेवन कर रहा है वह क्यों न मारा जायगा ॥१५॥ यह वैराग्य वर्णन है ।

—***—

अथ साधु लक्षणं वर्ण्यते ।

तत्र प्रमाणमाह महारामायणे शिव वाक्यं,
पार्वतीं प्रति ।

मुग्धे शृणुष्वमनुजोपि सहस्र मध्ये ।
धर्मंव्रतीभवति सर्व समान शीलः ॥

तेष्वेव कोटिषु भवेद्विषये विरक्तः ।
सद्ज्ञानको भवति कोटि विरक्तमध्ये ॥१६॥
ज्ञानीषु कोटिषु नृजीवनकोऽपि मुक्तः ।
कश्चित्सहस्र नरजीवन मुक्तमध्ये ॥
विज्ञानरूप विमलोत्पथधर्म लीन ।
स्तेष्वेव कोटिषुसकृत् खलुराम भक्तः ॥१७॥
वाह्यान्तरं शृणु तथा गिरिराज कन्ये ।
त्वत्तोवदामिरघुनाथ जनस्यमुख्यम् ॥
अन्यद्विहायसकलं सदसच्चकार्य्यम् ।
श्रीरामपंकजपदं सततं स्मरन्ति ॥१८॥

अब साधु लक्षण वर्णन करते हैं तहां श्रीमहारामायण में श्रीशिवजी का बचन श्रीपार्वतीजी से है कि हे मुग्धे सुनो हज़ार मनुष्यों में एक समान शील धर्मव्रती होता है। तिन कोटि धर्म व्रतियों में कोई एक विषय से विरक्त होता है कोटि विरक्तों के मध्यमें एक सद्ज्ञानवान होता है ॥१६॥ कोटि ज्ञानियों में एक जीवन मुक्त होता है हजार जीवनमुक्त में विज्ञान रूप विमल ज्ञान रूप एक ब्रह्म लीन होता है कोटि ब्रह्म लीनों में एक श्रीरामभक्त होता है ॥१७॥ हे गिरिराज कन्ये तुमसे श्रीरघुनाथजी के मुख्य जनोंके वाह्यान्तर लक्षण मैं कहता हूँ सत असत कार्य्य सब छोड़कर वे सदा निरन्तर श्रीरामजी के चरण कमल का स्मरण करते हैं ॥१८॥

श्रीरामनाम रसनाग्रपठन्तिभक्त्या ।
प्रेम्णाच गदगदागिरोप्यथ हृष्टलोमाः ॥
सीतायुतं रघुपतिं च किशोर मूर्तिं ।
पश्यंत्यहर्निशि मुदा परमेणरम्यम् ॥१९॥

भूमौजलेनभसि देवनरासुरेषु ।
भूतेषुदेविसकलेषु चराचरेषु ॥
पश्यन्ति शुद्ध मनसा खलुरामरूपं ।
रामस्यते भुवितले समुपासकाश्च ॥२०॥
शान्तस्समान मनसा च सुशीलयुक्त ।
स्तोषक्षमा गुणदया रिजुबुद्धि युक्तः ॥
विज्ञानज्ञान विरतिः परमार्थ वेत्ता ।
निर्द्धामकोभयमनाः स च रामभक्तः ॥२१॥

प्रेम पूर्वक गद्गद गिरा से भक्ति समेत रसना से श्रीराम नामको रटते हैं हर्षित रोम होकर श्रीविदेह राज नन्दिनीजू के समेत परम रम्य किशोर मूर्ति श्रीरघुपति को ध्यान में देखते हैं ॥१९॥ पृथ्वी जल आकाश देव मनुष्य असुर सकल चराचर भूतों में विशुद्ध मनसे जो श्रीराम-रूप को देखते है पृथ्वीतलमें वे ही श्रीरामोपासक हैं ॥२०॥ शान्त समान मनसे सुशील युक्त तोष क्षमा दयादि गुण युक्त तथा सरल बुद्धिमान् ज्ञान विज्ञान वैराग्य सहित परमार्थ के जानने वाला अनिकेत निर्भय मन वाला पुरुष श्रीरामभक्त कहा जाता है ॥२१॥

भाले च रम्यतिलकं विवरेख दीप्तं ।
रामांघ्रिविन्दु सहितं स च पीतमध्ये ॥
कंठे तथा तुलसिदाम लसद्भुजेवै ।
तप्तेन वाण धनुषांकित रामभक्तः ॥२२॥

भालमें रमणीय तिलक जो भी दो रेखा से विराजित श्रीरामजी के चरण सहित मध्यमें पीत बिन्दु सहित कंठमें तुलसी की कंठी भुजा में तप्त धनुष बाणसे अङ्कित श्रीरामभक्त कहे जाते हैं ॥२२॥

—***—

अन्यच्च भगवद्वाक्यम् ।

मद्भक्तः सरितां पति चुलकवत् खद्योतवद्भास्करम् ।
मेरुं पश्यति लोष्टवत् किम् परंभूमेः पतिं भृत्यवत् ॥
चिन्ता रत्नचयं शिला सकलवत् कल्पद्रुमं काष्ठवत् ।
संसारं तृणराशिवत्किपरं देहं निजं भारवत् ॥२३॥

और भी भगवद्वाक्य है कि मेरा भक्त समुद्र को चिल्लू समान सूर्य्य को खद्योत समान मेरु पर्वत को ढेला समान राजा को दासके समान चिन्तामणि को पत्थर के टुकड़े के समान कल्पवृक्ष को साधारण काष्ठ के समान संसार को तृण पुञ्जके समान देखता है । और अधिक क्या अपने देहको भी बोझा समान देखता है ॥२३॥

—❋❋❋—

श्रीमद्भागवते भगवद्वाक्यम् ।

कृपालु रकृतद्रोह स्तितिक्षुः सर्व देहिनाम् ।
सत्यसारोनवद्यात्मा समः सर्वोपकारकः ॥२४॥
कामैरहतधीर्दान्तो मृदुश्शुचिरकिंचनः ।
अनीहोमितभुक् शान्तस्थिरोमच्छरणोमुनिः ॥२५
अप्रमत्तोगभीरात्मा धृतवान् जित षड्गुणः ।
अमानीमानदः कल्पोमैत्रः कारुणिकः कविः ॥२६

श्रीमद्भागवत में भगवान ने कहा है कि मेरा भक्त कृपालु द्रोह रहित सब देहियों के अपराध को सहने वाला सत्य सार दूषण रहित सम सबका उपकारक होता है ॥२४॥ कामसे उसकी बुद्धि हत नहीं होती है इन्द्रियों को दमन करने वाला कोमल चित्त पवित्र निःकिंचन होता है अनीह मित भोगी शान्तस्थिर चित्त, मननशील मेरे शरण में सदा रहता है ॥२५॥ अप्रमत्त गंभीर स्वभाव वाला धैर्यवान कामादि

षड्गुणो को जीतकर स्वयं अमानी दूसरों को मान देता है समर्थ, सबका मित्र कारुणिक स्वभाववान, सर्वज्ञ होता है ॥२६॥

आज्ञायैवं गुणान्दोषान्मयादिष्टानपिस्वकान् ।
धर्म्मान्सन्त्यज्यय: सर्वान् मामभजेत्ससत्तमः॥२७
ज्ञात्वाज्ञात्वाच य मांवै यावान् यश्चास्मियादृशः ।
भजन्त्यनन्यभावेन तेमे भक्त तमामताः ॥२८॥
मल्लिंग मद्भक्तजन दर्शनस्पर्शनार्चनम् ।
परिचर्य्यास्तुतिप्रह्व गुणकर्मानुकीर्तनम् ॥२९॥

इस प्रकार गुण दोषों को जानकर हमारे कहे हुए भी अपने प्रवृत्ति मार्ग मय धर्मों को छोड़कर जो हमारा भजन करता है वह सज्जनों में श्रेष्ठ कहा जाता है ॥२७॥ मैं जितना बड़ा हूँ जिस प्रकार का जो हूँ उस तरह जानकर अथवा न जानकर अनन्य भावसे जो मेरा भजन करते हैं वे ही भक्त तम हैं ॥२८॥ मेरे मूर्तियों का तथा मेरे भक्त जनों का दर्शन स्पर्श अर्चन परिचर्य्या स्तुति तथा नम्र होकर मेरे गुण कर्मादि का कीर्तन करना भक्तों का सर्वस्व है ॥२९॥

--***--

हरिरुवाच जनकं प्रति ।

सर्व भूतेषु यः पश्येत भगवद्भाव मात्मनः ।
भूतानिभगवत्यात्मन्येष भागवतोत्तमः ॥३०॥
ईश्वरे तदधीनेषु वालिशेषु द्विषत्सु च ।
प्रेममैत्री कृपोपेक्षा यः करोति स मध्यमः ॥३१॥
अर्चायामेव हरये पूजां यः श्रद्धयेहते ।
न तद्भक्तेषु चान्येषु सभक्तः प्राकृतः स्मृतः ॥३२

नव योगेश्वरों में हरि नामक योगिराज का बचन श्रीनिमि महाराज से है कि जो भक्त सर्व भूतों में अपने आत्मा से भगवद्भाव को देखता है तथा आत्मरूप भगवान में सब भूतों को देखता है वह भागवतों में उत्तम कहा जाता है ॥३०॥ और ईश्वर में प्रेम भगवद्भक्तों में मित्रता मूर्खों में कृपा और शत्रुओं में उपेक्षा जो करता है वह मध्यम भक्त कहलाता है ॥३१॥ और जो अर्चा मात्रही में श्रद्धा सहित श्रीहरि के लिये पूजा करता है भगवद्भक्तों में तथा अन्य प्राणियों में कुछ भी श्रद्धा नहीं रखता है वह प्राकृत भक्त कहा जाता है अर्थात् अभी भक्ति का आरम्भ ही करने वाला है ॥३२॥

—***—

कवि वाक्यम् ।

खंवायु मग्निंसलिलं महीं च ज्योतींषि सत्वानि दिशोद्रुमादीन सरित्समुद्रांश्च हरेः शरीरं यत्किंच भूतं प्रणमेदनन्यः ॥३३॥

उन्हीं योगिश्वरों में कबि नामक योगिराज का बचन है कि आकाश वायु अग्नि जल पृथ्वी तारागणादि अन्य समस्त प्राणीदिशायें तथा वृक्षादि नदी समुद्रादि जो कुछ है वह सब श्रीहरि का शरीर है सबमें श्रीहरि हैं ऐसा जानकर जो प्रणाम करता है वह अनन्य कहा जाता है ॥३३॥

भक्तिः परेशान्भवोविरक्ति रन्यत्र चैषत्रिक एककालः प्रपद्यमानस्य यथाश्नतः स्युस्तुष्टिः पुष्टिः क्षुदपायोनुघासम् ॥३४॥

इत्युच्युतांघ्रिं भजतोनुवृत्त्या भक्तिर्विरक्तिर्भगवत् प्रवोधः भवन्ति वै भागवतस्य राजन् ततः परां शान्तिमुपैति साक्षात् ॥३५॥

भगवत शरणागत प्राप्त हुए पुरुष को भक्ति, परेशानुभव (ज्ञान) विरक्ति (वैराग्य) ये तीनों एक कालही होते जाते हैं जिस प्रकार भोजन करने वाले पुरुष को तोष व शरीर की पुष्टि क्षुधा की निवृत्ति प्रत्येक कवल में होती जाती है ॥३४॥ इसी तरह प्रेम सहित निरंतर भगवत चरण भजन करने वाले भागवत को भक्ति विरक्ति भगवत प्रबोध तीनों साथही हो जाते हैं इसके बाद परा शान्ति को साक्षात् वह भक्त प्राप्त होता है ॥३५॥

न कामकर्मबीजानां यस्यचेतसि सम्भवः ।
वासुदेवैकनिलयः सवै भागवतोत्तमः ॥३६॥
न यस्य जन्म कर्मभ्यां न वर्णाश्रम जातिभिः ।
सज्जतेऽस्मिन्नहं भावोदेहेवै सहरेः प्रियः ॥२७॥

जिसके चित्त में काम्य कर्म बीजों का संभव नहीं होता है सर्व व्यापी भगवानही जिसका एक स्थान है वही भागवतोंमें उत्तम हैं ॥३६ जन्म तथा कर्म से किम्बा वर्णाश्रम जाति से इस देहमें जिसका अहं-भाव नहीं होता है अर्थात् वर्णाश्रम जन्मकर्मादि का अभिमान जिसके चित्तमें नहीं आता है वही श्रीहरि का प्यारा भक्त है ॥३७॥

न यस्य स्वपर इतिवित्तष्वात्मनिवाभिदा ।
सर्व भूत समः शान्तः सवै भागवतोत्तमः ॥३८॥
त्रिभुवनविभव हेतवेप्यकुंठस्मृतिरजितात्म ।
सुरादिभिर्विमृग्यात् न चलति भगवत्पदारविन्दा
लव निमेषार्द्धमपि यः स वैष्णवाग्र्यः ॥३६॥

देह तथा धनादिकों में मेरा और पराया यह भेद भाव जिसके नहीं होता है सर्व प्राणियों में सम और शान्त है वही भागवतों में उत्तम कहा जाता है ॥३८॥ तीनों लोक के वैभव के विनाश में वा प्राप्ति में भी ब्रह्मा शिवादि देवों से सेवनीय भगवत पादारविन्द से जिसकी स्मृति लव निमेषार्द्ध भी चलित नहीं होती है वही वैष्णवों में अग्रगण्य माना जाता है ॥३९॥

—***—

तत्र प्रमाणमाह अध्यात्मे वाल्मीकि वाक्यं,
श्रीरामं प्रति ।

त्वन्मंत्र जापकोयस्तु त्वामेव शरणं गतः ।
निर्द्वन्दोनिस्पृहस्तस्य हृदयं तव मन्दिरम् ॥४०॥
निरहंकारिणः शान्ता रागद्वेष विवर्जिताः ।
समलोष्टाश्म कनकास्तेषां ते हृदयं गृहम् ॥४१
त्वयिदत्तमनोबुद्धिर्यः सन्तुष्टः सदाभवेत् ।
त्वयि संशक्त कर्मायस्तन्मनस्ते शुभंगृहम् ॥४२
यो न द्वेष्ट्यप्रियंप्राप्य प्रियं प्राप्य न हृष्यति ।
सर्वं मायेति निश्चित्य त्वां भजेतन्मनोगृहम् ॥४३

अध्यात्म रामायण में श्रीबाल्मीकिजी का बचन श्रीरामजी से है जो आपके मंत्रका जापक है आपही को रक्षक समझ कर शरण में प्राप्त हुआ है और द्वन्द्व रहित निष्प्रिह है उसका हृदय आपके बसने का मन्दिर है ॥४०॥ जो अहंकार रहित शान्त राग द्वेष से बर्जित हैं ढेला, सोना और पत्थर जिनको एक समान हैं उन्हीं भक्तों का हृदय आपका घर है ॥४१॥ जिसने अपने मन बुद्धि को आपमें लगा दिया है इसीमें सदा सन्तुष्ट है और सब कर्मों को जिसने आपको समर्पण कर दिया है उसका मन आपका परम शुभ घर है ॥४२॥ जो अप्रिय को प्राप्त होने पर द्वेष नहीं करता प्रिय प्राप्ति में हर्षित नहीं होता है यह सब आपकी माया है यह जिसने निश्चय कर जो आपका भजन कर रहा है उसका मन आपका घर है ॥४३॥

षड्भावादिविकारान् यो देहे पश्यति नात्मनि ।
क्षुत्तृट्सुखंभयं दुःख प्रबुद्धो न निरीक्ष्यते ॥४४
संसार धर्मैर्निर्मुक्त स्तस्यते मानसं गृहम् ॥४५

पश्यन्ति ये सर्व गुहासयस्थं त्वांचिद्घनंसत्य-मनन्तमेकं अलेपकं सर्वगतं वरेण्यं तेषां हृदब्जे सहसीतया बस ॥४६॥

अस्ति जायते एवमादि षड्विकारों को देह में देखता है आत्मा में नहीं तथा भूख प्यास सुख दुःख भयादिकों को अपने स्वरूप में स्थित होकर मोह निद्रा से जागा हुआ नहीं देखता है ॥४४॥ समस्त संसार धर्मों से निर्मुक्त है उस भक्तका मानस आपके रहने का घर है ॥४५॥ जो सर्व गुहासयस्थ चिद्घन सत्य अनन्त एक निर्लेप सर्वगत सबके वरणीय आपको देखते हैं उनके हृदय कमळ में श्रीजनकात्मजाजी के सहित आप बसिये ॥४६॥

निरन्तराभ्यास दृढ़ीकृतात्मनां त्वत्पाद सेवा परि निष्ठितानां त्वन्नाम कीर्त्या हतकल्मषाणां सीतासमेतस्यगृहं हृदब्जे ॥४७॥

रामत्वन्नाम महिमा वर्ण्यते के न वा कथम् ।
यत्प्रभावादहं राम ब्रह्मर्षित्व मवाप्तवान् ॥४८॥

निरन्तर अभ्याससे जिन्होंने अपने आत्माको दृढ़कर लिया है तथा जो आपके चरण सेवा में परिनिष्ठित हो रहे हैं और आपके नाम कीर्तन से जिनके कल्मष नष्ट हो गये हैं उनका हृदय कमल श्रीजानकी जी के समेत आपके रहने का घर है ॥४७॥ हे श्रीरामजी आपके नामकी महिमा को कौन किस प्रकार कह सकता है जिस नामके प्रभाव से मैं ब्रह्मर्षित्व को प्राप्त हुआ हूँ ॥४७॥

---

* पद *

कबहुँक यह गुन मन धरि है ॥ टेक ॥
काम धाम धन देह सनेही तँह न नेह करि है ।
जहँलगिविषयविलासरामबिनुविषसमलखिडरिहैं ॥

मान पमान मित्र अरि सुख दुख समकरि आचरि है ।
क्रूर बचन सुनि विषम अग्नि सम जलहै नहिं जरि है ॥
सर्व भूत हरिरूप कहत श्रुति कबहुँ देखि परि है ।
सम सन्तोष ज्ञान भाजन करि राम चरित भरि है ॥
परहित दया भक्ति रघुबर की सकल काम टरि है ।
रामचरण श्रीराम कृपा ते भवसागर तरि है ॥४६॥

इति श्रीराम-नवरत्न सार संग्रहे साधु लक्षण वर्णननाम् सप्तम रत्नमम् ७ ।

संत सभा सुखसिन्धु सम मथव ब्रह्मजिज्ञास ।
रामरूप गुण रत्न भव रामचरण अनयास ॥१॥

अब श्रीकरुणासिन्धुजी महाराज अष्टम रत्नमें सन्त सभा क्षीर समुद्र है ब्रह्म जिज्ञासुओं का सत्संग मथन करना है श्रीरामजी के रूप गुणादिक रत्नके समान अनायास सन्तों के संगसे प्राप्त होते हैं यह दिखलाते हैं ॥१॥

वन्दे सन्त समाजमम्बुधिपतिं गाधन्तुनो पायकैः ।
रामोनाम रमारमेश इतियत्विज्ञानरूपः फणी ॥
जातोराम कथेन्दुरेव किरणैस्तापत्रयोन्मूलनो ।
यत्र प्रेम पयोथ रामचरणस्तेभ्योपिसद्भयोनमः ॥२
श्रीमद्राम स्वरूपतो ज्ञन वपुर्भिन्नंनजातं क्वचित् ।
मीनाद्या रघुनाथ यादव पतिस्सर्वे वतारायथा ॥
इत्थं ये प्रतिवोधयंतिस्वजनान्रामः प्रसन्नः सदा ।
नित्यं चैवनमामि रामचरणस्तांवै सदा सेवकान्॥३

संत समाज रूपी क्षीर समुद्र को हम बन्दन करते हैं जो अन्य उपायों से गाध नहीं होता है अर्थात् जिसकी थाह नहीं मिलती। श्रीराम नामके दोनों वर्ण ही जिसमें लक्ष्मीनारायण रूप हैं विज्ञान रूपी शेष जिसमें हैं श्रीरामजी की कथा चन्द्रमा है जो अपने किरणों से तापत्रय को उन्मूलन करने वाला है जिसमें प्रेम रूपी दुग्ध भरा है। श्रीकरुणासिन्धुजी कहते हैं कि उन सज्जनों को मैं नमस्कार करता हूँ ॥२॥ श्रीरामजी के स्वरूप से संतों का रूप भिन्न नहीं है अर्थात् भगवान से भक्त भिन्न नहीं हैं जैसे मीनादि अवतार श्रीरघुनाथ तथा यादवपति से भिन्न नहीं हैं इस प्रकार अपने आश्रितों को जो उपदेश देते हैं उनके ऊपर श्रीरामजी सदा प्रसन्न रहते हैं अतएव तिन श्रीरामजी के सेवकों को श्रीकरुणासिन्धुजी महाराज कहते हैं कि मैं सदा प्रणाम करता हूँ ॥३॥

इस प्रकार संत नमस्कार कर अब सन्त माहात्म्य प्रमाण सहित दिखलाते हैं।

अन्यच्च ।

जाड्यंधियोहरति सिंचति सत्यवाक्यं मानोन्नाति दिशति पापमपा करोति । चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं सत्संगतिः कथयकिन्न करोति पुंसाम् ॥ ४ ॥

—***—

श्रीभागवते च ।

तुलायाम लवे नापि न स्वर्गं ना पुनर्भवम् ।
भगवत्संगि संगस्य मर्त्यानां किमुताशिषः ॥५॥

किसी अभियुक्त का बचन है कि बुद्धि की जड़ता को हरना, सत्य वाक्य को सींचना, मानकी उन्नति करना, पाप को दूर कर चित्तको प्रसन्न करना दिशाओं में कीर्ति को फैलाना यह सत्संग का स्वाभाविक गुण है सज्जनों का संग कहिये पुरुषों को क्या क्या लाभ नहीं पहुँचा सकता है ॥४॥ श्रीमद्भागवतमें कहा है कि भगवत आशक्ति

वाले सन्तों के संगका लव मात्रको भी स्वर्ग और मोक्षका हम तुलना नहीं कर सकते तो मनुष्यों के धनादिकों को क्या कहना है ॥५॥

--*‌*‌*--

एकादशे जनक वाक्यम् ।

दुर्लभोमानुषोदेहो देहिनां क्षण भंगुरः ।
तत्रापि दुर्लभंमन्ये बैकुण्ठ प्रियदर्शनम् ॥६॥

तत्रैव भगवद्वाक्यम् ।

नरोधयति मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव ।
न स्वाध्याय तपस्त्यागो नेष्टा पूर्तं न दक्षिणा ॥७
व्रतानि यज्ञ छन्दांसि तीर्थानि नियमा यमाः ।
यथा वरुंधे सत्संगः सर्व संगायहोहि माम् ॥८

एकादश में श्रीविदेह महाराज का बचन है कि देह धारियों को क्षण भंगुर भी मनुष्य देह दुर्लभ है उसपर भी भगवान के प्यारे भक्तों का दर्शन दुर्लभ है ॥६॥ उसीमें भगवान का बचन है कि हे उद्धव योग, सांख्य, धर्म्म, तप, त्याग, इष्टा, पूर्त और दक्षिणा, ब्रत, यज्ञ, वेदाध्ययन, तीर्थ, नियमादिक ये सब धर्म्म उस तरह बश नहीं कर सकते हैं जिस प्रकार सब आशक्तियों का छोड़ने वाला सत्संग हमें बश कर लेता है ॥८॥

सत्संगे नहि दैतेया यातुधानाः खगा मृगाः ।
गन्धर्वाप्सरसो नागाः सिद्धाश्चारण गुह्यकाः ॥६
विद्याधरा मनुष्येषु वैश्याः शूद्रास्त्रियोंत्यजाः ।
रजस्तमः प्रकृतयस्तस्मिंस्तस्मिं युगे नघ ॥१०॥
वहवोमत्पदं प्राप्तास्त्वाष्ट्र कायाधवादयः ।
वृषपर्वा वलिर्वाणो मयश्चाथ विभीषणः ॥११॥

सतसंगही से दैत्य, जातुधान, गन्धर्व, अप्सरा, नागसिद्ध, चारण, गुह्यक ॥९॥ तथा विद्याधर, मनुष्यों में वैश्य, शूद्र स्त्री और अन्त्यज थे रजोगुण तमोगुण प्रकृति वाले हे अनघ तिस तिस युगमें ॥१०॥ बहुत से मेरे पदको प्राप्त हुए जैसे वृत्रासुर, प्रह्लाद वृष पर्वा राजा बलि, बाणासुर, मय दानव तथा श्रीविभीषणजी ॥११॥

सुग्रीवो हनुमानृक्षोगजो गृद्ध्रो बणिकपथः ।
व्याधः कुब्जाब्रजेगोप्यो यज्ञ पत्न्यस्तथापरे ॥१॥
तेनाधीत श्रुतिगणानोपासित महत्तमाः ।
अवृता तप्त तपसः सत्संगान् मामुपागता ॥१३

सुग्रीवजी, श्रीहनुमानजी, ऋक्षराज जाम्वान्, गज, गृद्ध जटायुजी, तुलाधार, व्याध, कुब्जा, ब्रजकी गोपियाँ तथा यज्ञ पत्नी ये सब हमको प्राप्त हुए ॥१२॥ इन्होंने वेदों का अध्ययन नहीं किया था। किसी महात्मा की भी सेवा वैसी नहीं की थी ब्रत या तप भी न था केवल सत्संगही से हमको प्राप्त हुए ॥१३॥

———

अध्यात्म रामायणे परशुराम वाक्यं श्रीरामं प्रति।

यावत्त्वत्पाद भक्तानां संग सौख्यं न विन्दति ।
तावत्संसार दुःखौघान्नानिवर्तेन्नरः सदा ॥१४॥
सत्संगलब्धयाभक्त्या यदा त्वां समुपासते।
तदामाया शनैर्याति तानवं प्रति पद्यते ॥१५॥
ततस्त्वद् ज्ञान सम्पन्नः सद्गुरुस्तस्य लभ्यते ।
वाक्यज्ञानं गुरोर्लब्ध्वात्वत्प्रसादाद्विमुच्यते ॥१६

अध्यात्म रामायण में परशुराम का बचन श्रीरामजी से है कि हे श्रीरामजी जब तक आपके भक्तों का संग सुख पुरुष को नहीं प्राप्त होता है तबतक संसार दुःख समूहों से छुटकारा नहीं पाता है ॥१४॥

सत्संग से प्राप्त हुई भक्ति से जब आपकी उपासना करने लगता है तबही माया धीरे धीरे हटने लगती है और बिल्कुल दुर्बल हो जाती है ॥१५॥ फिर आपके ज्ञानसे युक्त सद्गुरु का लाभ उसे प्राप्त होता है गुरुमुख से ज्ञान पाकर आपके कृपासे संसार से छूट जाता है ॥१६॥

तस्मात्त्वद्भक्ति हीनानां कल्प कोटि शतैरपि ।
न भुक्तिर्न च विज्ञान शक्यं नैव सुखं तथा ॥१७
अतस्त्वत्पाद युगले भक्तिर्मे जन्म जन्मनि ।
स्यात्त्वद्भक्तिमतां संगो विद्यायाभ्यांविनश्यति ॥१८
लोके त्वद्भक्तिनिरतास्त्वद्धर्मामृतवर्षिणः ।
पुनंति लोकमखिलं किं पुनः स्वकुलोद्भवान् ॥१९
नमोस्तु जगतां नाथ नमस्ते भक्ति भावन ।
नमः कारुणिकानन्त रामचन्द्रनमोस्तुते ॥२०

तिसते आपके भक्ति हीनों को सौ कोटि कल्प भी मुक्ति तथा विज्ञान प्राप्त होने को शक्ति नहीं हो सकती तथा सुख भी नहीं मिलता ॥१७॥ अतः आपके चरण कमलों में जन्म जन्म मुझे भक्ति मिले और आपके भक्ति वालों का संग होवै जिस दोनों से अविद्या नष्ट हो जाती है ॥१८॥ लोक में जो आपके भक्ति में निरत हैं तथा आपके धर्म रूप अमृत का वर्षा करने वाले हैं वे सन्त अखिल विश्व को पवित्र करते हैं अपने कुलमें उत्पन्न होने वालों को कहना ही क्या है ॥१९॥ हे जगन्नाथ आपको नमस्कार है हे कारुणिक अनन्त आपको नमस्कार है हे श्रीरामचन्द्रजू महाराज आपको नमस्कार है ॥२०॥

अध्यात्मे सुन्दर कांडे शुक सारण वाक्यं रावणं प्रति ।

सत्संगतिं कुरु भजस्व हरिं शरण्यं श्रीराघवं-
मरकतोत्पल कांति कान्तम् । सीतासमेतमनिशं

धृत चाप बाणं सुग्रीव लक्ष्मण विभीषण सेवि-तांघ्रिम् ॥ २१ ॥

मोह मुद्गरे ।

नलिनी दल गत जल लव तरलं तदवज्जीवन मतिशय चपलं क्षणमपि सज्जन संगतिरेका भवति भवार्णव तरणे नौका ॥२२॥

अध्यात्मरामायण के सुन्दर कांडमें शुक सारन का बचन रावण से है कि हे रावण सत्संगति को कर और शरण्य मरकत मणि तथा नील कमल के समान श्याम चाप बाणको धारण किये सुग्रीव बिभीषणादि लक्ष्मण से सेवित हैं चरण जिनके जानकीजी के समेत ऐसे श्रीहरि राघव को तुम भजन करो ॥२१॥ मोह मुद्गर में लिखा है कि कमल के पत्ता पर जलका बूँद जैसे चंचल होता है उसी तरह जीवन अतिशय चपल है इस कारण क्षण मात्र भी सज्जनों की संगति संसार समुद्र तरने की नौका हो जाती है ॥२२॥

आदि पुराणे ।

गंगा पापं शशी तापं दैन्यं कल्पतरुस्तथा ।
पापं तापं तथा दैन्यं हन्ति साधु समागमः ॥२३

श्रीभागवत कपिल वाक्यं देवहुतीं प्रति ।

प्रसंगमजरंपाशं मात्मनः कवयो विदुः ।
स एव साधु सुकृतो मोक्ष द्वारमपावृतः ॥२४॥

आदि पुराण में लिखा है कि गंगा पापको चन्द्रमा तापको कल्प वृक्ष दीनता को दूर करता है और पाप ताप तथा दीनता को साधु समागम अकेला ही विनाश करता है ॥२३॥ श्रीभागवत में कपिलदेवजी

का बचन देवहुतीजी से है कि हे मातु जनों का संगही आत्मा का दृढ़ पास कबि लोग कहते हैं वही संग यदि साधुओं में किया जाय तो खुला हुआ मोक्षका द्वार है ॥२४॥

तितिक्षवः कारुणिकाः सुहृदस्सर्वदेहिनाम् ।
अजातशत्रवः शान्ताः साधवः साधु भूषणः ॥२५
मय्यनन्येन भावेन भक्तिं कुर्वन्ति ये दृढाम् ।
मत्कृतेत्यक्त कर्माणस्त्यक्त स्वजनबांधवाः ॥२६

यदि बूझो कि साधु कौन हैं तो जो अपराध तथा दुःखों को सहने वाले करुणावान सर्व देहियों के मित्र जिनको शत्रुने कहीं जन्मही नहीं लिया है इस प्रकार शान्त साधुही साधु भूषण कहे जाते हैं ॥२५॥ तथा हमारे में अनन्य भावसे जो दृढ़ भक्ति करते हैं मेरे लिये अपने वर्णाश्रमादि कर्मों को जिन्होंने छोड़ दिया है और स्वजन बधुओं को परित्याग कर दिया है उन्हें साधु जानो ॥२६॥

इति सत्संग वर्णनम् ।

ब्रह्मांड पुराणे ।

दुर्लभोवैष्णवो लोके दुर्लभं वैष्णवं व्रतम् ।
दुर्लभावैष्णवीभक्तिः सधन्यो यत्रवर्तते ॥२७॥
नरस्तस्योपदेशेन नीचोपि गुरुताम्व्रजेत् ।
पारदेन यथाताम्रे कांचनत्वं प्रजायते ॥२८

श्रीभागवते ।

नह्यम्मयानि तीर्थानि न देवामृच्छिलामयाः ।
ते पुनन्त्युरुकालेन दर्शनादेव साधवः ॥२९॥

अब वैष्णव माहात्म्य कहते हैं ब्रह्मांड पुराण में कहा है कि लोक में वैष्णव दुर्लभ हैं वैष्णव व्रत भी दुर्लभ है तथा वैष्णवी भक्ति दुर्लभ

है वह देश धन्य है जहाँ ए वैष्णव होवें ॥२७॥ वैष्णवों के उपदेश से नीच भी मनुष्य गौरव को प्राप्त हो जाता है जैसे पारद का साथ होने से ताम्र में सुवर्णत्व प्राप्त होता है ॥२८॥ श्रीभागवत में भी कहा है कि क्या जलमय तीर्थ नहीं है, क्या मृतिका शिलामें देव नहीं है किन्तु वे बहुत कालमें पवित्र करते हैं साधु दर्शन मात्रही से पवित्र करते हैं ॥२९

———

अन्यच्च भगवद्वाक्यं ब्रह्माणं प्रति ।

नैवेद्यं पुरतोमह्यं चक्षुषा गृह्यतेमया ।
रसंदासस्य जिह्वाग्रा दश्नामि कमलोद्भव ॥३०

पाद्मे ।

नैवेद्यं जगदीशस्य अन्नपानादिकं च यत् ।
भक्ष्याभक्ष्य विचारस्तुनास्तितद्भक्षणेक्वचित् ॥३१

और भी भगवान का बचन ब्रह्माजी से है कि हे कमलोद्भव मेरे सामने जब नैवेद्य कोई स्थापित करते हैं तो मैं उसे नेत्रही से ग्रहण करता हूँ और उसका रस दासौ के जिह्वाग्र से गृहण करता हूँ अर्थात् जब मेरे भक्तों को कोई भोजन कराता है तब मैं तृप्त होता हूँ ॥३०॥ पद्म पुराण में कहा है कि जगदीश के अन्न पानादि नैवेद्य भक्षण में भक्षाभक्ष्यका विचार कहीं न करना चाहिये अर्थात् भगवन्निवेदित अन्न किसी के स्पर्श होनेपर भी वह अभक्ष्य नहीं माना जाता है ॥३१॥

विष्णार्नैवेद्यं भोक्तव्यं कोटि जन्माघ नाशनम् ।
तदेवाष्ट गुणं पापं सिक्थं भूमि निपातनात् ॥३२

श्रीविष्णु भगवान के नैवेद्य को भोजन करना चाहिये क्योंकि वह कोटि जन्मों के पापोंको नाश करने वाला है और उसीको एक सिक्थ भी प्रमाद से पृथ्वी में गिराने पर अष्ट गुण पाप होता है ॥३२॥

—***—

श्रीभागवते ।

महद्विचलनं नृणां गृहीणां दीन चेतसाम् ।
निःश्रेयसाय भगवन् कल्पते नान्यथा क्वचित् ॥३३

रघूगणैतत् तपसा न याति न चेज्या निर्वपणाद् गृहाद्वा न छन्दसा नैव जलाग्नि सूर्यैर्विना महत्पादरजोभिषेकम् ॥३४॥

श्रीमद्भागवत में लिखा है कि महात्माओं का पृथ्वी में बिचरना दीन चित्त गृहस्थों के कल्याण ही के लिये हो सकता है अन्यथा नहीं ॥३३॥ जड़ भरतजीका भी बचन है कि हे रघूगण परमात्म ! संबंधी यथार्थ ज्ञान केवल तपसे नहीं प्राप्त हो सकता है और न यज्ञादिकों से, घर छोड़ने पर भी नहीं प्राप्त हो सकता, न वेद से, न जल अग्नि सूर्यकी तपस्या करने से बिना महात्माओं के चरणरजके अभिषेक के यह नहीं प्राप्त हो सकता है ॥३४॥

—***—

भगवद्वाक्यं ।

अहं भक्त पराधीनो अस्वतंत्र इव द्विज ।
साधुभिर्ग्रस्त हृदयोभक्तैर्भक्तजनप्रियः ॥३५॥
साधवो हृदयंमह्यं साधूनां हृदयंत्वहं ।
मदन्यत्तनजानन्ति नाहं तेभ्यो मनागपि ॥३६॥

स्कान्दे ।

गीतादिस्तव पाठेन गोविन्दस्य च कीर्तनात् ।
साधुर्दर्शन मात्रेण कोटि तीर्थ फलंलभेत् ॥३७

भगवान का बचन दुर्वासा से है कि पराधीन के समान मैं भक्तों के आधीन हूँ साधु भक्तों से मेरा हृदय ग्रस्त है क्योंकि मुझे भक्त जन अति प्रिय हैं ॥३५॥ साधु मेरा हृदय हैं मैं साधुओं का हृदय हूँ वे मेरे बिना कुछ नहीं जानते हैं। मैं भी साधुओं के बिना किंचित् मात्र भी किसी को कुछ नहीं जानता हूँ ॥३६॥ स्कन्द पुराण में भी लिखा है कि गीतादि स्तव पाठ करने से तथा गोबिन्द भगवान के कीर्तन से और साधुओं के दर्शन मात्रसे कोटि तीर्थों का फल प्राप्त होता है ॥३७॥

पाद्मे ।

कुलं पवित्रं जननीकृतार्था वसुन्धराभागवती च धन्या । स्वर्गेस्थिता ते पितरश्च धन्या येषां कुले वैष्णवनामधेयम् ॥३८॥

शुद्धं भागवतस्यान्नं शुद्धं भागीरथी जलम् ।
शुद्धंविष्णुपदं तीर्थं शुद्धं वैष्णव दर्शनम् ॥३९॥
तिस्रः कोट्यर्द्ध कोटीश्च तीर्थानि भुवनत्रये ।
वैष्णवांघ्रिजलात् पुण्यंकोटि भागेननोसमम् ॥४०
नातः परतरं तीर्थं वैष्णवांघ्रि जलात् शुभात् ।
तेषां पादोदकं नित्यं गंगामपि पुनातिहि ॥४१

पद्म पुराण में लिखा है कि वह कुल पवित्र है वह माता कृतार्थ रूपा है भागवतों के संबंध वाली पृथ्वी भी धन्य है स्वर्ग में स्थित वे पितृ गण भी धन्य हैं जिनके कुलमें एक भी वैष्णव नाम ध्येय पुरुष उत्पन्न होता है ॥३८॥ वैष्णवों का अन्न परम शुद्ध है भागीरथीजी का जल शुद्ध है भगवान के चरणार्विन्द शुद्ध तीर्थ हैं और भक्तों का दर्शन परम शुद्ध है ॥३९॥ तीनों लोक में साढ़े तीन करोड़ तीर्थ कहे जाते हैं परंच वैष्णवों के चरण जलके पुण्य की कोटि भागकी बराबरी नहीं कर सकते हैं ॥४०॥ इस वैष्णवों के शुभ चरण जलसे कोई भी परतर तीर्थ नहीं है क्योंकि वैष्णवों का चरणोदक नित्य गंगा को भी पवित्र करता है ॥४१॥

रामभक्तानुशेषंतु योहि भुंक्ते दिने दिने ।
सिक्थे सिक्थे भवेत्पुण्यं चान्द्रायणशताधिकम् ॥४२
कोटि जन्मार्जितं पापं ज्ञानतो ज्ञानतो पि वा ।
सद्यः प्रणश्यते नॄणां वैष्णवोच्छिष्ट भोजनात् ॥४३

श्रीराम भक्तों का अनुशेष अर्थात् उच्छिष्टप्रसाद जो दिन दिन नित्य भोजन करता है उसको एक एक सिक्थ में सौ चान्द्रायण से भी अधिक पुण्य होता है ॥४२॥ ज्ञानसे किंवा अज्ञान से कोटि जन्म के बटोरे हुए भी मनुष्यों के पाप वैष्णवों के उच्छिष्ट भोजन से तुरन्त बिनाश हो जाते हैं ॥४३॥ --***--

आगमेपि ।

आस्फोटयन्ति पितरो नृत्यंति च मुहुर्मुहुः ।
मद्वंशे वैष्णवो जातः स नो त्राता भविष्यति ॥४४
तावद्भ्रमन्ति संसारे पितरो पिंड तत्पराः ।
यावद्वंशे सुतोराम भक्ति युक्तो न जायते ॥४५
सदातिष्ठन्ति तत्रैव सर्वं तीर्थानि देवताः ।
निमिषं निमिषार्द्धेण यत्रातिष्ठन्ति वैष्णवाः ॥४६

आगम में भी लिखा है कि पितृ गण सब ताल ठोंकते हैं बार-बार नाचते हैं कि हमारे वंशमें वैष्णव उत्पन्न हुआ है वह हमारी रक्षा करेगा ॥४४॥ पिंड में तत्पर हुए पितृ गण तब तकही संसार में भ्रमण करते हैं जब तक श्रीराम भक्ति युक्त पुत्र उनके वंशमें नहीं उत्पन्न होता है ॥४५॥ सब तीर्थं और देवता वहांही सदा स्थित होते हैं जहाँ पर निमेष किम्वा आधा निमेष भी वैष्णव स्थित होते हैं ॥४६॥

—***—

श्रीभागवते ।

विप्राद्विषड्गुणयुता दरविन्द नाभ पादार्विन्द
विमुखात्स्वपचं वरिष्ठं मन्येतदर्पित मनो वचने
हितार्थ प्राणं पुनाति सकुलं नतु भूरिमानः ॥४७॥

अन्यच्च भगवद्वाक्यम् ।

यथाखरश्चंदनभारवाही भारस्यवेत्ता न तु चन्दनस्य ।

तथाहिविप्रा षट् शास्त्र युक्ता मद्भक्तहीनाः खर-
वद्वहन्ति ॥४८॥

चाण्डालमपि मद्भक्तं नावमन्येत बुद्धिमान ।
अवमन्येद्विमूढ़ात्मा रौरवं नरकं व्रजेत् ॥४६॥

श्रीमद्भागवत में कहा है कि कमल नाभ भगवान के पादार्विन्द से विमुख बारह गुण युक्त वाले भी ब्राह्मण से भगवान में मन बचन चेष्टा धन प्राण अर्पण करने वाले स्वपच को मैं श्रेष्ठ मानता हूँ क्योंकि वह निरभिमान भक्ति करते हुए समस्त कुल को पवित्र करता है और भगवद्भक्ति से विमुख अभिमान से भरा हुआ ब्राह्मण अपने आत्मा को भी नहीं पवित्र कर सकता ॥४७॥ और भी भगवान का बचन है कि जैसे बोझा का ढांने वाला गर्दभ अपने ऊपर लदे हुए चन्दन के बोझा मात्र ही को जानता है चन्दन के गुण माहात्म्य को नहीं जानता इसी तरह मेरी भक्ति से हीन षट्शास्त्र युक्त भी ब्राह्मण यथार्थ तत्वको न जान कर शास्त्र का भार खरवत् वहण करते हैं ॥४८॥ बुद्धि मानको चाहिये कि चांडाल जाति वाले भी मेरे भक्तका अपमान न करै और जो विमूढ़ात्मा अपमान करता है वह रौरव नर्क को प्राप्त होता है ॥४९॥

—***—

पद्मपुराणे शिव वाक्यम् ।

तुलसी काष्ठ सम्भूतां मालिकां यमकिंकराः ।
दृष्ट्वा नश्यन्ति दूरेण वातोद्धूतं यथाघनम् ॥५०॥
धारयंति न ये मालां हैतुकाः पाप बुद्धयः ।
नरकान्ननिवर्तन्ते दग्धाः कोपाग्निनाहरेः ॥५१॥
तुलसी मालिकां धृत्वायोभुंक्तो गिरिनन्दिनि ।
सिक्थे सिक्थे स लभते वाजिपेय शताधिकम् ॥५२
स्नानकालेपियस्यांगे दृश्यते तुलसी शुभा ।

गंगादि सर्व तीर्थेषु स्नातं तेन न संशयः ॥५३॥

पद्म पुराण में श्रीशिवजी का बचन है कि तुलसी काष्ठ से बनी हुई माला को देखकर यमके दूत दूरसे भागते हैं जैसे पवन से उड़ाये मेघ भागैं ॥५०॥ जो नास्तिक पाप बुद्धि वाले तुलसी माला को नहीं धारण करते हैं वे श्रीहरि के क्रोधाग्नि से जले हुए नर्क से नहीं निवृत्त होते हैं ॥५१॥ हे गिरि नन्दिनि तुलसीकी मालाको धारण कर जो भोजन करते हैं वे सिक्थ सिक्थ में सौ वाजिपेय से भी अधिक फल पाते हैं ॥५२॥ स्नान कालमें भी जिनके अङ्गों में शुभ तुलसी की माला देखी जाती है। गंगादि सर्व तीर्थों में उन्होंने स्नान किया इसमें सन्देह नहीं ॥५३॥

अन्तकालेपि यस्यांगं तुलसी मालिकास्पृशेत्।
तस्यदेहोद्भवं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥५४॥
कंठशिरसि वाहूभ्यां कर्णयोः करयोस्तथा।
विभ्रियात्तुलसींयस्तु स ज्ञयो विष्णुना समः ॥५५
यज्ञसूत्रं विनाविप्राः वेद हीना क्रिया यथा।
सत्यहीनं यथा वाक्यं मालाहीना न वैष्णवाः ॥५६

अन्त कालमें भी जिसके अङ्गको तुलसी मालास्पर्श करती है उसके देहसे उत्पन्न हुए पाप उसी क्षण नष्ट हो जाते हैं ॥५४॥ कंठ शिर, दोनों वाहू दोनों कर्ण दोनों हाथों में तुलसी को जो धारण करता है उसको विष्णु भगवान के समान जानना चाहिये ॥५५॥ यज्ञोपवीत बिना जैसे ब्राह्मण नहीं है वेद हीन जैसे क्रिया व्यर्थ है सत्य हीन जैसे बचन तिसी तरह बिना तुलसी के माला वैष्णव नहीं ॥५६॥

ब्राह्मणानांयथा सन्ध्या गृहीणां पितृ तर्पणम्।
अदक्षिणो यथा यज्ञो मालाहीना न वैष्णवाः ॥५७
ततः सर्वेषु कालेषु धार्या तुलसि मालिका।
क्षणार्द्धं तद्विहीनोपि विष्णुद्रोही भवेन्नरः ॥५८

तत्र प्रमाणम् ।

अर्च्ये विष्णौशिलाधीर्गुरुषु नरमतिर्वैष्णवेजाति बुद्धि र्विष्णोर्वा वैष्णवानां कलिमल मथने पाद तीर्थेम्बुबुद्धिः सिद्धे तन्नाम्नि मंत्रे सकल कलुषहे शब्दसामान्य बुध्दिः श्रीशेसर्वेश्वरेशे तादितर सम-धीर्यस्यवै नारकीसः ॥५६॥

ब्राह्मणोंकी जैसे सन्ध्या नित्य कर्म है गृहस्तों को पितृ तर्पण नित्य है बिना उसके उनके धर्म की सिद्धि नहीं है बिना दक्षिणा के जैसे यज्ञ नहीं है उसी तरह माला के बिना वैष्णवत्व की सिद्धि नहीं है ॥५७॥ तिसते सर्व कालमें तुलसी माला धारण करना चाहिए आधा क्षण भी उसके बिहीन होने से मनुष्य विष्णु द्रोही हो जाता है ॥५८॥ और भी प्रमाण हैं कि भगवान के अर्चा मूर्ति में जो पत्थर बुद्धि करता है गुरु में मनुष्य बुद्धि करता है और वैष्णव में जाति बुद्धि करता है भगवान अथवा वैष्णवों के कलिमल हरने वाले चरणामृतमें जो जल बुद्धि रखता है सर्व कलुष हरने वाले भगवान के नाम वा मंत्रमें सब शब्दों के समान बुद्धि करता है श्री जी के ईश सर्वेश्वर भगवान में इतर देवतों के समान बुद्धि करता है उसको नारकी जानना चाहिये ॥५९॥

—***—

नारद पंचरात्रे भगवद्वाक्यम् ।

ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वाणप्रस्थो यतिस्तथा ।
चत्वारश्चाश्रमाह्येते पंचमो मद्विपाश्रयः ॥६०॥
वर्णाश्रमाभिमानेन श्रुतेर्दासो भवेन्नरः ।
वर्णाश्रमविहीनाश्च तिष्ठान्ति श्रुतिमूर्ध्दनि ॥६१॥
जातिर्विद्यामहत्वं च रूप यौवन मेव च ।
यत्नेन वर्जनीयावै पंचैतेभक्ति कंटकाः ॥६२॥

यदावातादि दोषेण मद्भक्तोमां च न स्मरेत् ।
तदास्मराम्यहं भक्तं ददामि परमां गतिम् ॥६३

नारद पंच रात्रमें भगवान का बचन है कि ब्रह्मचारी गृहस्थ वाणप्रस्थ, सन्यासी ये चार आश्रम हैं और पाँचवाँ आश्रम वह है जो मेरे आश्रय में रहता है अर्थात् वैष्णवाश्रम ॥६०॥ वर्णाश्रम के अभिमान से मनुष्य श्रुतिका दास होता है और जब ज्ञान होने से वर्णाश्रम विहीन हो जाता है तब श्रुतियों के मूर्द्धा में रहता है ॥६१॥ जाति, विद्या, महत्व, रूप, यौवन इनके अभिमान को यत्नसे परित्याग करना चाहिए यही भक्ति के पांच कंकट हैं ॥६२॥ जिस समय वातादि दोषों से भक्त मेरा स्मरण नहीं कर सकता है उस समय उस भक्तको मैं स्मरण करता हूँ और परम गति को देता हूँ ॥६३॥

--***--

एकादशे भगवद्वाक्यम् ।

सत्येप्रलीनाः स्वर्यान्ति नरलोकं रजोलयाः ।
तमोलयाश्तु निरयं यान्तिमामेव निर्गुणाः ॥६४
मदर्पणं निःफलं वा सात्विकं निज कर्मतत् ।
राजसंफल संकल्पं हिंसाप्रायादि तामसम् ॥६५
कैवल्यं सात्विकं ज्ञानं रजो वैकल्पिकंतुयत् ।
प्राकृतं तामसं ज्ञानं मन्निष्ठं निर्गुणं स्मृतम् ॥६६
बनेतु सात्विको वासो ग्रामेराजस उच्यते ।
तामसं द्यूत सदनं मन्निकेतन्तु निर्गुणम् ॥६७
सात्विकः कारकोसंगी रागान्धों राजसः स्मृतः ।
तामसः स्मृतिः विभ्रष्टोनिर्गुणोमांद्विपाश्रयः ॥६८

एकादश में भगवान का बचन है कि सत्व गुणके रहने पर शरीर छूटने से स्वर्ग को जाते हैं रजोगुण में जो मरते हैं वे मनुष्य लोक में

जाते हैं तमो गुण में मरने से नर्क में जाते हैं गुणों से रहित होकर जो मरते हैं वे हमको प्राप्त होते हैं ॥६४॥ जो अपना कर्म निःफल अथवा मेरे को अर्पण करके करते हैं वह सात्विक हैं फल संकल्प सहित राजस है हिंसादि अनुसन्धान से जो कर्म हैं वह तामस है ॥६५॥ कैवल्य ज्ञान सात्विक है वैकल्पिक ज्ञान राज है और प्राकृत ज्ञान तामस है मन्निष्ठ ज्ञान निर्गुण है ॥६६॥ बनका बास सात्विक है और ग्रामका बास राजस है जुवा वगैरः के खेलने वाले गृहमें बास तामस है मेरे मन्दिरों का बास निर्गुण है ॥६७॥ असंग होकर कर्म करने वाला सात्विक है रागसे अन्ध होकर कर्म करने वाला राजस है स्मृति से विभ्रष्ट कर्म करने वाला तामस है और मेरे आश्रय रहकर कर्म करने वाला निर्गुण है ॥६८॥

सात्विक्या ध्यात्मकीश्रद्धा कर्म श्रद्धातु राजसी ।
तामस्यधर्मे या श्रद्धामत्सेवायांतु निर्गुणाः ॥६९

पथ्यं पूत मनायस्तमाहार्यं सात्विकंस्मृतम् ।
राजसं चेन्द्रियप्रेष्ठं तामसं चार्तिदाशुचि ॥७०॥

सात्विकं सुखमात्मोत्थं विषयोत्थतुं राजसम् ।
तामसं मोह दैन्योत्थं निर्गुणं मद्दिपाश्रयम् ॥७१

आध्यात्मि की श्रद्धा सात्विकी है कर्म श्रद्धा राजसी है तथा अधर्म में जो श्रद्धा है वह तामसी है मेरी सेवा में जो श्रद्धा वह निर्गुण है ॥६९ पवित्र परिश्रम न देने वाला आहार सात्विक है इन्द्रियों को प्रसन्न करने वाला आहार राजस है रोगादि बढ़ाने वाला आहार तामस है आत्मानुसन्धान का सुख सात्विक है विषय सेवन का सुख राजस है मोह दैन्य में जो सुख है वह तामस है मेरे रूप गुण नामादि का सुख निर्गुण है ॥७१॥

श्रीभगवद्गीतायाम् ।

जन्म कर्म च मेदिव्य मेवं यो वेत्ति तत्वतः ।
त्यक्त्वादेहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोर्जुन ॥७२॥

ब्रह्मः भूत प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति ।
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ॥७३॥
दैवी ह्येषा गुणमयीम ममाया दुरत्तया ।
मामेव ये प्रपद्यन्ते माया मे तां तरन्ति ते ॥७४

श्रीभगवद्गीता में भगवान ने कहा है कि मेरा जन्म कर्म दिव्य है इस प्रकार जो यथार्थ जानता है वह देह को छोड़कर फिर जन्म को नहीं पाता है किन्तु हे अर्जुन वह हमको प्राप्त होता है ॥७२॥ ब्रह्मभूत प्रसन्नात्मा जो न शोच करता है न कुछ चाहना करता है सर्व भूतों में जो सम हैं वह मेरी परा भक्ति को पाता हैं ॥७३॥ यह मेरी गुणमयी माया दुरत्यय है जो मेरे ही शरण में प्राप्त होते हैं वे ही इस माया को तरते हैं ॥७४॥

—***—

अन्यच्च ।

हरेर्द्धर्म परित्यागी सक्य मानो नराधमः ।
असक्तस्य परित्यागे न दोषा चिन्त्ययेघदि ॥५५

श्रीभागवते ।

गृहेषु वसतां वापि पुंसां कुशल कर्मणाम् ।
मद्वार्ता यात यामानां न बंधाय गृहामताः ॥७६

और भी लिखा है कि समर्थ होने पर जो भगवद्धर्म परित्याग करता है वह नरों में अधम कहा जाता है असमर्थ होने पर चिन्तवन करते हुए भगवद्धर्म परित्याग ने पर दोष नहीं है ॥७७॥
श्रीमद्भागवत में लिखा है कि कुशल कर्म वाले घरमें बसते हुए मेरी वार्ता में समय विताने वालों को घर बंधन का हेतु नहीं है ॥७८॥

—***—

प्रह्लाद वाक्यम् ।

तत्साधुमन्ये सुरवर्यदेहिनां सदा समुद्विग्नधिपा
मसद् गृहात् । हित्वात्मपातं गृह मन्ध कूपं वनं गतो

यद्धरि माश्रयेत् ॥७७॥

क्षणार्द्धेणापि तुलये न स्वर्गं न पुनर्भवम् ।
भगवत्संगि संगस्य मर्त्यानां किमुताशिषः ॥७८

प्रह्लादजी का बचन है कि हे असुर वर असत पदार्थ के ग्रहण से जिनकी बुद्धि सदा उद्विग्न है ऐसे देह धारियों के लिये मैं यही अच्छा मानता हूँ जो कि अन्ध कूप आत्मपात करने वाले घरको छोड़कर बन में जाकर श्रीहरि का आश्रय लेवे ॥७७॥ आधे क्षण भी भगवत अनुरागियों के साथ की बराबरी स्वर्ग और मोक्ष से नहीं कर सकते तो मनुष्यों के धनादिकों को क्या कहना है ॥७८॥

एतेसत्पुरुषाः परार्थ घटकाः स्वार्थान्परित्यज्यये ।
सामान्यं परस्वार्थमुद्यमभृतः स्वार्था विरोधे न ये ॥
ते मी मानुषराक्षसाः परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये ।
येतुघ्नन्ति निरर्थकंपरहितं ते के न जानीमहे ॥७६

वे सत्पुरुष हैं जो स्वार्थ को छोड़कर दूसरे के अर्थ के लिये तत्पर रहते हैं और जो अपने स्वार्थ को रखकर दूसरे के अर्थ में तत्पर होते हैं वे साधारण पुरुष कहलाते हैं और वे पुरुष राक्षस हैं जो अपने स्वार्थ के लिये दूसरे के हितको नाश करते हैं और जो बिना प्रयोजन ही के दूसरे के अर्थ को नाश करते हैं वे कौन हैं यह हम नहीं जानते ॥७९॥

—***—

आगमसारे ।

शास्त्रदृष्टं गुरोर्वाक्यं तृतीयं चात्म निश्चयम् ।
त्रिविधं योभि जानाति स मुक्तो जन्मवन्धनात् ॥८०

श्रुतिः ।

दशहस्तांगुलयो दशपाद्या द्वाबुरू द्वौ बाहौ
आत्मैव पंचविंशकः ॥८१॥

आगम सारमें लिखा है कि शास्त्र को देखकर तथा श्रीगुरु महाराज के बचन को और तृतीय अपने आत्मा का निश्चय इन तीनों को जो जानता है वह जन्म बन्धन से मुक्त होता है ॥८०॥ श्रुति में लिखा है कि दश हाथ की अङ्गुली दश पांवकी और दो ऊरू दो बाहू इस प्रकार का आत्मा पचीसवाँ है इससे आत्मा को साकार बतलाया ॥८१॥

—***—

* पद *

मन कहँ जो सत संगति भावै ॥ टेक ॥

तौ सब विषय विलास छोड़ के सहज परम सुख पावै ।
तीरथ जप तप नेम दान व्रत वहु जन्मनि करि आवै ॥
शुद्ध होय ततकाल संतके दरस परस कर तावै ।
योग विरति विज्ञान काल वहु शुद्ध समाधि लगावै ॥
परमतत्व सोइ एकै छिनमें सत संगति दरसावै ।
व्रह्मलोक दिकपाल लोक सुख पर सुख मोक्ष कहावै ।
तुलैनछिनसतसंगसुखहिकोरामचरणश्रुतिगावै ॥८२

इति श्रीराम-नवरत्न सार संग्रहे सत्संग दर्श परस सम्भाषण सर्वोपरिपावन प्राप्ति वर्णनं नाम अष्टमं रत्नम् ८ ।

—***—

* दोहा *

नष सिष सीताराम छबि, जब लगि हृदय न बास ।
रामचरण सब साधना, तव लगि लखव निरास ॥१

श्रीसीतारामजी की नष सिष छवि जब लगि जीव के हृदय में नहीं बसती है तब तक सब साधन निरास जानना चाहिए यह सिद्धान्त इस नवें रत्नमें श्रीकरुणासिन्धुजी महाराज दिखलावैंगे ॥१॥

--***--

रामं नौमि किरीट कुंडलयुतं चंद्रांशु कोटि प्रभम् ।
विद्युत्कोटि विनिन्दकं सुतिलकं राजीवनेत्रं परम् ॥
रम्यं कोटि समुद्रसूनुवदनं नाशास्फुरन्मौक्तिकम् ।
सर्वालंकृतभूषितं कर धनुर्वामांक सीतास्थितम् ॥२
यस्यांशेन जगद्भूव सकलं ब्रह्माहरिः शंकरो ।
यं ध्यायन्ति महर्षयः सुमनसा सर्वेवतारा यतः ॥
कीर्तिर्यस्य पुराण वेद भणितापारं न ते वैगताः ।
नित्यस्थं परधाम रामचरणोभक्त्या भजेराशिकम् ॥३

किरीट कुण्डल से युक्त कोटि सूर्य्य के समान प्रभा वाले कोटि विद्युत को निन्दित करने वाले तिलक युक्त राजीव नैन पर से भी पर अति रमणीय कोटि चन्द्र समान मुख वाले नाशिका में मुक्ताफल स्फुरित है जिनके और सब अलंकारों से भूषित कर कमल में धनुष वाण लिये तथा वाम भाग में श्रीविदेहराज कुमारीजी स्थित हैं जिनके ऐसे श्रीरामजी को मैं नित्य ही नमस्कार करता हूँ ॥२॥ जिनके अंशसे सकल जगत हुआ है ब्रह्मा, विष्णु, शिव तथा अन्य महर्षिगण सुन्दर मनसे जिनका नित्य ध्यान करते हैं सब अवतार जिनसे होते हैं जिनकी कीर्ति को पुराण वेद कहते हैं तथा पार भी नहीं पाते हैं नित्य परधाममें स्थित रास रसमें लीन इस प्रकार के श्रीरामजी को रामचरण नामक कवि मैं नित्य भजता हूँ ॥३॥

—***—

सनत्कुमार संहितायां वेदव्यास वाक्यम् ।

श्रीरामचन्द्र रघुपुंगव राजवर्य राजेन्द्र राम रघु-

नायक राघवेश राजाधिराज रघुनन्दन रामभद्र दासोहमद्य भवतः शरणागतोस्मि ॥४॥

बशिष्ठ संहितायाम् ।

रामस्य नामरूपं च लीलाधाम परात्परम् ।
एतच्चतुष्टयंनित्यं सच्चिदानन्द विग्रहम् ॥५॥

सनत्कुमार संहिता में श्रीवेद व्यासजी का बचन है कि हे श्रीरामचन्द्रजी हे रघुपुंगव हे राजवर्य्य हे राजेन्द्र हे राम हे रघुनायक हे राघवेश हे राजाधिराज हे रघुनन्दन मैं आपका दास हूँ आज आपके शरण में आया हूँ ॥४॥ वशिष्ठ संहिता में कहा है कि श्रीरामजी का नाम और रूप तथा लीला परात्पर धाम ये चारो नित्य सच्चिदानन्द विग्रह हैं ॥५॥

—***—

श्रीमद्भागवते श्रीहनुमद्वाक्यम् ।

सुरोसुरोवाप्यथवानरोनरः सर्वात्मनायः सुकृतज्ञमीश्वरं । भजेतरामं मनुजाकृतिं हरिं य उत्तराननयत्कोशलान् दिवम् ॥६॥ न जन्मनूनं महतो न सौभगं न बाङ् न बुद्धिर्नाकृतिस्तोष हेतुः । तैर्यत् विशिष्टा नपिनो वनौकसश्चकार सख्येवत् लक्ष्मणाग्रजः ॥७॥

श्रीमद्भागवत में श्रीहनुमानजी का बचन है कि सुर अथवा असुर नर वा पशु कोई भी हो सुकृतज्ञ मनुजाकृति हरि ईश्वर जो उत्तर कोशला वासियों को अपने परम पद को ले गये ऐसे श्रीरामजी को जो सर्व प्रकार से भजता है वही श्रेष्ठ है ॥६॥ निश्चय है कि हमारे सबों का न कोई महत संबंधी जन्म है न कुछ सौन्दर्य्य है न बचन है न बुद्धि है आकृति भी उनके तोष का हेतु नहीं है इन सब गुणों से रहित बनके

बसने वाले हम सब बानरों को श्रीलक्ष्मणाग्रज श्रीरामजी ने सखा बनाया ऐसा कृतज्ञ कौन ईश्वर होगा ॥७॥

--***--

नवमे शुक वाक्यम् ।

यस्यामलं नृप सदस्सुयशोधुनापि गायन्त्यघघ्नमृषयोदिगिभेन्द्रपट्टं तन्नाकपाल वसुपाल किरीटजुष्ट पादाम्बुजं रघुपतेः शरणं प्रपद्ये ॥८॥

एकादशे योगेश्वर वाक्यम् ।

सोऽब्धिबवंध दश वक्त्रमहन्सलंकं सीतापति र्जयति लोक मलघ्नकीर्तिः ॥९॥

श्रीधर वाक्यम् ।

ॐनमः परमहंसास्स्वादित चरण कमलचिन्मकरन्दाय भक्त जनमानसनिवासाय श्रीरामचन्द्राय ॥१०॥

नवम स्कन्ध में श्रीशुकदेवजी का बचन है कि दिशाओ के दिग्गजों के भाल पर अङ्कित जिसके निर्मल यशको सर्व पाप नाशक जानकर ऋषि वृन्द राजाओं के सभा में भी आज तक गा रहे हैं। वे इन्द्रादिक लोक पाल पृथ्वी के चक्रवर्ति राजा तथा पाताल वासियों के किरीटों से सदा सेवित श्रीरघुपति के चरण कमल को मैं सदा शरण में प्राप्त हूँ ॥८॥ एकादश स्कन्ध में योगीश्वरों ने कहा है कि जिन्होंने समुद्र को बाँधा और लंका सहित रावण को मारा लोक के पापों के नाश करने वाली जिनकी कीर्ति है ऐसे श्रीसीतापति श्रीरामजी सदा जय को प्राप्त ॥९॥

श्रीधरजी का मंगलाचरण है कि जिनके चिन्मय चरण कमल मकरन्द को तत्वदर्शी परमहंस सदा आस्वादन करते हैं भक्त जनों के

मानस में निवास करने वाले ऐसे श्रीरामचन्द्रजी को मेरा नमस्कार है ॥१०॥

—※※※—

भगवद्गीतायां श्रीमद्भगवद्वाक्यम् ।

सर्व धर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रजः ।
अहंत्वा सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामिमाशुचः ॥११
अपिचेत् सु दुराचारो भजते मामनन्यभाक् ।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग् व्यवसितोहिसः ॥१२

भगवत गीतामें भगवान का बचन है कि हे अर्जुन मेरे प्रतिकूल सर्व धर्मों को छोड़ कर एक मेरे ही शरण में प्राप्त हो जा मैं सब पापों से तुझे छुड़ाऊँगा तू शोच मत कर ॥११ अतिशय दुराचार क्यों न हो पर अनन्य होकर जो मेरा भजन करता है उसे साधुही मानना चाहिए क्योंकि उसका निश्चय बहुत ठीक हो गया है ॥१२॥

—※※※—

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायणे श्रीरामचन्द्र वाक्यं, सुग्रीवं प्रति ।

आनयैनं हरिश्रेष्ठ दत्तमस्या भयं मया ।
विभीषणो वा सुग्रीव यदि वा रावणः स्वयम् ॥१३
सकृदेवप्रपन्नाय तवास्मीति च याचते ।
अभयं सर्व भूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रतंमम ॥१४॥

श्रीमद्वल्मीकीय रामायण में श्रीरामजी का बचन सुग्रीव से है कि हे हरि श्रेष्ठ सुग्रीव यह विभीषण हो अथवा स्वयं रावण ही हो इसे आप ले आइये मैं इसको अभय दे चुका हूँ ॥१३॥ एक बार भी मैं आपका हूँ इस तरह याँचना करते हुए प्रपन्न शरणागत को मैं सर्व भूतों से अभय देता हूँ यह मेरा व्रत है अर्थात् प्रतिज्ञा है ॥१४॥

अयोध्या काण्डे पुरजन वाक्यम् ।

कथं चिदुपकारेण कृते नैके न तुष्यति ।
नस्मरत्यप काराणां शतमप्यात्मवत्तया ॥१५॥

इति शरणागति वर्णनम् ।

अयोध्या कांडमें पुरजनों का वाक्य है कि किसी प्रकार से एक भी किए हुए उपकार से श्रीरामजी प्रसन्न होते हैं और सैकड़ों अपकारों को अपने विलक्षण स्वभाव से कभी स्मरण भी नहीं करते हैं ॥१५॥ इस प्रकार शरणागति का वर्णन है ।

अध्यात्म्ये किष्किन्धा कांडे सुग्रीव वाक्यं, श्रीरामं प्रति ।

त्वत्पाद पद्मार्पितचित्त वृत्तिस्त्वन्नाम संगीत कथासुवाणी त्वद्भक्त सेवा नियतौ करौ मे त्वदंग संगं लभतां मदंगम् ॥१६॥ त्वन्मूर्तिभक्तान् च गुरुं च चक्षुः पश्यत्वजस्रं स शृणोतु कर्णः त्वज्जन्म कर्माणि च पादयुग्मं व्रजत्वजस्रं तवमन्दिराणि ॥१७

अंगानि ते पाद रजो विमिश्र तीर्थानि बिभ्रत्वहि शत्रुकेतो शिरस्त्वदीयं भवपद्मजाद्यैर्जुष्टपदं राम व्रजत्वजस्रम् ॥१८॥

अध्यात्म रामायण के किष्किंधा कांडमें सुग्रीवजी का बचन श्रीरामजी से है कि हे श्रीरामजी महाराज आपके चरणार्विन्द में मेरी चित्त वृत्ति समर्पित हो जावै मेरी वाणी आपके नाम कथा का कीर्तन करै मेरे हस्त आपके भक्तों की सेवा में सदा नियत रहैं मेरे सम्पूर्ण अंग

आपके श्रीअङ्ग का संग पावैं ॥१६॥ आपकी मूर्ति तथा आपके भक्त वा अपने श्रीगुरू महाराज को मेरा नेत्र सदा देखै निरन्तर आपके यशको मेरा कान श्रवण करै आपके जन्म कर्मों को भी सदा श्रवण करै मेरे दोनों चरण आपके मन्दिरों की सदा प्रदक्षिण किया करै ॥१७॥ हे गरुड़ध्वज मेरे समस्त अंग आपके चरण रजसे मिले हुए तीर्थों को धारण करैं मेरा शिर शिव ब्रह्मादिकों से सेवित आपके चरण कमल को निरन्तर प्राप्त होवै ॥१८॥

दाराः पुत्रं धनं राज्यं सर्वंत्वन्मायया कृतम् ।
अतोहंदेव देवेश न कांक्ष्येन्यत् प्रसीदमे ॥१६॥
न जीर्यतेपुनर्दीर्घं भजते संसृतिः प्रभो ।
त्वत्पाद दर्शनात् सद्यो नाशमेति न संशयः ॥२०
क्षणार्द्धमपियच्चित्तं त्वयितिष्ठ त्यचंचलम् ।
तस्य ज्ञान मनर्थाणां मूलं नश्यति तत्क्षणात् ॥२१

हे देव देवेश स्त्री, पुत्र, धन, राज्य यह सब आपके माया का किया हुआ है इस कारण इन सबों की मैं कांक्षा नहीं करता हूँ मेरे ऊपर आप प्रसन्न हों ॥१९॥ जो संसृति जन्म मरण प्रवाह कभी जीर्ण नहीं होता है किन्तु उत्तरोत्तर दीर्घ भावको ग्रहण करती है वह आपके चरण के दर्शन करने ही से उसी क्षण नाश होती है इसमें सन्देह नहीं ॥२०॥ जिसका चित्त अचंचल होकर आधा क्षण भी आपमें स्थित होता है उसका अनर्थों का मूल अज्ञान उसी क्षण नाश हो जाता है ॥२१॥

आरण्य कांडे श्रीरामचन्द्र वाक्यं शवरीं प्रति ।

यज्ञ दान तपोभिर्वा वेदाध्ययन कर्मभिः ।
नैवं द्रष्टु महं शक्यो मद्भक्ति विमुखैः सदा ॥२२

आरण्य कांडमें श्रीरामचन्द्रजी का बचन शवरीजी से है कि यज्ञ दान, तप तथा वेदाध्ययनादि कर्मों से मेरे भक्ति से विमुख नरों को

मैं दर्शन देने को सक्य नहीं हूँ अर्थात् भक्ति विमुख मेरे को कभी नहीं देख सकते हैं ॥२२॥

—***—

ब्रह्मांण्ड पुराणे श्रीरामगीतायां श्रीरामवाक्यम् ।

मद्भक्त मादरेद्यस्तु मनः स्पर्शन भाषणैः ।
तंहितमपि पश्यामि वशिष्ठ महतामिव ॥२३॥
मद्भक्तेभ्यः प्रयच्छन्ति सुवस्तूनि धनान्यपि ।
आतिथ्यं करिष्यामि तस्याहं सीतया सह ॥२४

ब्रह्मांड पुराण के श्रीराम गीतामें श्रीरामजी का बचन है कि जो मनसे शरीर के स्पर्श से तथा प्रिय भाषणादि से मेरे भक्तका आदर करता है उसको मैं वशिष्ठादि महर्षियों के समान देखता हूँ ॥२३॥ जो मेरे भक्तों को सुन्दर वस्तु तथा धनादिक देता है उसके आतिथ्य सत्कार को श्रीजनकजाजी के समेत मैं करता हूँ ॥२४॥

—***—

श्रीमद्भागवते भगवद्वाक्यम् ।

भक्त्याहमेकयाग्राह्यः श्रद्धयात्मा प्रियः सताम् ।
भक्तिः पुनातिमन्निष्ठान् श्वपाकानपिसम्भवात्॥२५
ततो दुस्संगमुत्सृज्य सत्सुसज्जेत बुद्धिमान् ।
संत एतस्यछिन्दंति मनोव्यासंग मुक्तिभिः ॥२६
सन्तोदिशन्ति चक्षूंषि वहिरर्कः समुत्थितः ।
देवतावान्धवाः सन्तः सन्त आत्माहमेव च ॥२७

श्रीमद्भागवत में भगवान का बचन है कि सज्जनों का प्रिय आत्मा मैं एक श्रद्धा भक्तिही से ग्राह्य हूँ क्योंकि मेरे में निष्ठ भक्ति नीच योनियों में उत्पन्न हुए भी स्वपच पर्यन्तों को पवित्र करती है ॥२५॥ तस्मात् दुःसंग को छोड़कर बुद्धिमान् सन्तों के संगमें आशक्त होवैं संत इसके मनकी आसक्ति को अपनी उक्तियों से छेदन कर देते हैं

संत भीतर के दिव्य नेत्रों को प्रकाशित करते हैं जैसे उदय हुए सूर्य ॥२६॥ सन्त बाहर के नेत्रों को प्रकाशित करते हैं सन्तही देवता और बान्धव हैं सन्तही आत्मा हैं और सन्तही मैं भी हूँ ॥२७॥

—***—

द्वादशे शिव वाक्यम् ।

अथापि संवदिष्यामो भवान्येतेन साधुना ।
अयंहि परमो लाभोनृणां साधु समागमः ॥२८

द्वादश में श्रीशिवजी का भी बचन है कि हे भवानी तब भी मैं इस साधु से मिलूंगा क्योंकि मनुष्यों को साधु समागम होना यही परम लाभ है ॥२८॥

—***—

भागवते ।

तिरस्कृता विप्रलब्धा सप्ताः क्षिप्ता हताअपि ।
नास्यतत्प्रति कुर्वन्ति तद्भक्ताः प्रभवोपिह ॥२९
प्रायसः साधवो लोके परैर्द्वन्द्वेषु योजिताः ।
नव्यथन्ति न हृष्यन्ति यत आत्मा गुणाश्रयः ॥३०

श्रीमद्भागवत में और भी कहा है कि भगवान के भक्त समर्थ होने पर भी जब किसी से तिरस्कार को पाते हैं वा विप्र लंभित होते हैं कोई गालियां देता है तथा आक्षेप करता है किन्तु मारता भी है तथापि उसका बदला वे नहीं लेते हैं ॥२९॥ प्रायः करके लोक में साधु जन जब अन्य पुरुषों से दुःख किम्बा सुखमें योजित होते हैं तव न वे व्यथित होते हैं न हर्षित होते हैं क्योंकि यह शरीर गुणों के आधीन है जिस समय में जो भोग आता है वह होता है किसी का दोष नहीं समझते हैं ॥३०॥

—***—

एकादशे ।

देवर्षिभूताप्तनृणान्पितृणां न किंकरो नायमृणी
च राजन् । सर्वात्मनायः शरणं शरण्यं गतो मुकुन्दं

परिहृत्य कृत्यम् ॥३१॥

एकादशमें कहा है कि हे राजन् जो सब प्रकार से शरणागत रक्षक श्रीमुकुन्द भगवान के शरण में अपने सब कृत्यों को छोड़ कर गया है वह न देवता न ऋषि न प्राणी न बांधव न मनुष्य न पितृयों का किंकर है और न वह किसी का ऋणी है ॥३१॥

—***—

पृथु प्रकरणे ।

सर्वत्रास्खलितादेशः सप्तद्वीपैक दंड धृक् ।
अन्यत्र ब्राह्मण कुलादन्यत्राच्युत गोत्रतः ॥३२

प्रथमस्कन्धेपि ।

नैष्कर्म्यमप्यच्युत भाववर्जितं न शोभते ज्ञान-मलं निरजनं । कुतः पुनः शश्वदभद्रमीश्वरे न चार्पितं कर्म यदप्यकारणम् ॥३३॥

आत्मारामाश्चमुनयो निर्ग्रन्था अप्युरुक्रमे ।
कुर्वन्त्यहैतुकीं भक्ति मित्थंभूतगुणो हरिः ॥३४॥

पृथु महाराज के प्रकरण में है कि पृथु महराज का हुकुम कहीं पर भी स्खलित नहीं हुआ अर्थात् रोका नहीं गया वे सप्त द्वीपके एकही दंड धारी हुए ब्राह्मण कुल तथा अच्युत गोत्र वैष्णवों को छोड़ कर ॥३२॥ प्रथम स्कन्ध में लिखा है कि अच्युत भावसे वर्जित निरंजन नैष्कर्म भी ज्ञान शोभित नहीं होता है तब निरन्तर अकल्याण रूप निष्काम भी कर्म ईश्वर में न अर्पित होने से कब शोभित हो सकता है ॥३३॥ जो मुनि अहंकार ग्रन्थि से रहित हुए आतमा राम हो रहे हैं वे भी श्रीहरि में निर्हेतु की भक्ति करते हैं क्योंकि श्रीहरि में गुण ही ऐसे पड़े हैं ॥३४॥

—***—

दशमे ब्रह्मणो वाक्यम् ।

श्रेयस्रुतिं भक्ति मुदस्यते विभोक्लिश्यन्ति ये

केवल बोधलब्धये । तेषामसौ क्लेशहि एव शिष्यते नान्यद्यथास्थूल तुषाव घातिनाम् ॥३५॥

येन्येरविन्दाक्ष विमुक्तमानिनस्त्वय्यस्तभावा दविशुद्ध बुद्धयः आरुह्य कृच्छ्रेण परं पदं ततः पतंत्यधो नाद्दत युष्मदंघ्रयः ॥३६॥

दसम स्कन्ध में ब्रह्माजी का बचन है कि हे प्रभो कल्याण मार्ग भूता आपकी भक्ति को छोड़ कर जो केवल ज्ञान प्राप्ति के लिये साधनों के क्लेश को उठाते हैं उनको वह क्लेशही हाथमें रह जाता है दूसरा कुछ नहीं जैसे धान के पैया कूटने वालों को क्लेश से अतिरिक्त कुछ फल नहीं मिलता है ॥३५॥ इससे हे अरविन्दाक्ष जो विमुक्त मानी हुए अशुद्ध बुद्धि से आपमें भाव भक्ति नहीं करते हैं वे बड़े क्लेश से परम पदको पाकर भी आपके चरणों का आदर न करने से नीचे गिर जाते हैं ॥३६॥

--***--

श्रीमन्महा रामायणे शिव वाक्यम् ।

श्रीरामं ये चहित्वा खलमतिनिरता ब्रह्मजीवं वदन्ति ते मूढ़ानास्तिकास्ते शुभगुण रहिताः सर्व बुद्ध्यातिरिक्ताः पापिष्ठा धर्महीनाः गुरुजनविमुखा वेद शास्त्रैर्विरुद्धा तेहित्वागांगमम्भो रविकिरण जलं पातुमिच्छन्त्यतृप्ताः ॥३७॥

येमर्त्या रामपादौक्षितिसुतविमलौ संविहायार्त्त वन्धो ते मूढ़ा वोधहेतोः घृतपरि घटने वारि मंथान युक्ताः यो ब्रह्मास्मीति नित्यं वदति हृदि विना

राम चन्द्रांघ्रि पद्मं ते बुद्धास्त्यक्त पोतास्तृण परि निचये सिन्धु मुग्रं तरन्ति ॥३८॥

श्रीमहारामायण में श्रीशिवजी का बचन है कि जो श्रीरामजी को छोड़ कर खलमति में निरत हुए जीव को ब्रह्म बतलाते हैं वे मूढ़ नास्तिक हैं शुभ गुणसे रहित सब बुद्धि से हीन हैं पापिष्ठ धर्म हीन गुरु जनों से विमुख वेद शास्त्र से विरुद्ध हो रहे हैं जैसे गंगाके जलको छोड़ कर पिपासा से व्याकुल सूर्य किरण जलको पान करने को चाहते हैं ॥३७॥ जो मनुष्य आर्त बन्धु श्रीरामजी के मंगल दायक विमल चरणों को छोड़कर अन्य साधनों में बोध के लिये रत होते हैं वे घृतके लिये मानो जलको मंथन कर रहे हैं और जो हृदय में श्रीरामजी के चरणों को न रख कर मैं ब्रह्म हूँ इस प्रकार कहता है वह भी नौका को छोड़ कर तृण समूह से उग्र समुद्र को तरना चाहता है ॥३८॥

ये केवलाद्वैतमतानुरक्ता श्रीराममूर्त्तिं विमलां विहाय ते षामदृश्या हरिदश्वमूर्त्तिः पश्यन्तिमूढ़ाः प्रतिविंवकुंभे ॥३९॥ ये रामभक्तिममलांशु विहाय रम्यां ज्ञानेरताः प्रतिदिनं परिक्लिष्टमार्गे आरान्महेन्द्र-सुरभिंपरिहृत्य मूर्खा अर्कं भजन्ति सुभगे सुख दुग्ध हेतोः ॥४०॥

जो विमल श्रीराम मूर्ति को छोड़कर केवल अद्वैत मतमें अनुरक्त है उनको सूर्य मूर्ति अदृश्य है वे मूढ़ कुम्भ घटमें प्रतिबिम्ब ही को देखते हैं ॥३९॥ और जो विमल रमणीया श्रीराम भक्ति को छोड़कर नित्यशः क्लेशमय मार्ग वाले ज्ञान मात्रही में रत हैं वे मूर्ख समीप में कामधेनु को छोड़ कर हे शुभगे सुख रूपी दुग्ध के लिये अर्कको सेवन कर रहे हैं ॥४०॥

त्यक्त्वा श्रीरघुनन्दनं पर तरं नाम स्वरूपं तथा । ब्रह्मण्येववदन्ति ये सद सतः पूर्णं यथा काशवत् ॥

ते वै तन्दुल हेतवे तुषमहोनिघ्नन्ति दुर्बुद्धयः ।
छित्वासूल मथाश्रयन्ति च दलंतैः सद्गुरुर्नोकृतः॥४१
किं वर्णयामि विमले वहुभि प्रकारैः सीतापते।
विगत ज्ञान विशेष सर्वं ज्ञानं तदेव कुसुमं च यथा॥
नभोगं सत्यं वदामिह यथा न सुखं च स्वप्ने ॥४२

जो परात्पर श्रीरघुनन्दनजी तथा उनके नाम रूपको छोड़कर केवल ब्रह्म में इस तरह विवाद करते हैं कि वह ब्रह्म सत असत से पर है जैसे आकाश वैसे ही सर्वत्र पूर्ण है वे दुर्बुद्धि चावलों के वास्ते धानके पैयाको कूट रहे हैं मूलको छेदन कर मानो दलका आश्रय कर रहे हैं उन्होंने सद्गुरु नहीं किया ॥४१॥ हे विमले हम बहुत प्रकार से तुमसे क्या वर्णन करैं श्रीसीतापति से रहित विगत ज्ञानही जानना चाहिए वह ज्ञान आकाश के फूलके समान है मैं सत्य कहता हूँ कि उसमें स्वप्न में भी सुख नहीं है ॥४२॥

—***—

श्रीभागवते प्रथम नारद वाक्यम् ।

न यद्वचश्चित्र पदंहरेर्यशो जगत् पवित्रंप्रग्रणीत कर्हिचित् तद्वायसं तीर्थमुशन्ति मानसा न यत्र हंसा-विरमन्त्युशक्क्षया ॥४३॥

तद्वागविसर्गोजनताघ विप्लवोयस्मिं प्रतिश्लोक मवध्यवत्यापि नामान्यनन्तस्ययशोंकितानि यच्छृ-ण्वंति गायन्ति गृणन्ति साधवः ॥४४॥

श्रीभागवत के प्रथम स्कन्ध में श्रीनारदजी का बचन है कि जिस कवि का विचित्र पद वाला भी बचन जगत पावन श्रीहरि यशको कभी भी उच्चारण नहीं करता है वह कौवों के रहने का घाट है कमनीय ब्रह्म में निवास करने वाले मान सरोवर के हंस सदृश महात्मा

उसमें रमण नहीं करते हैं ॥४३॥ वह वाग विसर्ग अर्थात् काव्य जन समूहों के पापका नाश करने वाला है जिसमें प्रति श्लोक अवध्य होने पर भी अनन्त भगवान के नाम यश अंकित है साधुगण उसीको गाते हैं सुनते हैं तथा उच्चारण करते हैं ॥४४॥

नूनं दैवेन निहता येप्यच्युत कथासुधां हित्वा श्रृण्वन्त्यसद्गाथां पुरीषमिवविड्भुजः ॥४५॥

निश्चय से वे लोग दैवसे हत हो रहे हैं जो कि भगवान की कथा अमृत को छोड़कर असद् गाथा को श्रवण करते हैं वे विष्टा भोगी बराह के समान मलके भोगने वाले हैं ॥४५॥

—***—

एकादशे ।

तस्माद्गुरुं प्रपद्येताजिज्ञासुः श्रेय उत्तमम् ।
शाब्दे परे च निष्णातं ब्रह्मण्युप समाश्रयम् ॥४६
तत्र भागवतान्धर्मां शिक्षेद्गुर्वात्म दैवतः ।
अमायया नु वृत्या च यैस्तुष्ये दात्मदोहरिः ॥४७

नृदेहमाद्यं सुलभं सु दुर्लभंप्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारम् मयानुकूलेन नभस्वतेरितंपुमान् भवाब्धिं न तरेत्सआत्महा ॥४८॥

एकादश स्कन्ध में कहा है कि तस्मात् उत्तम श्रेयको जानने वाला शब्द ब्रह्म तथा परब्रह्म में निष्णात ब्रह्ममें सर्वात्म आश्रय लेने वाले गुरु के पास जाय ॥४६॥ और गुरुको अपना आत्मा तथा पूज्य दैवत समुझ कर वहां पर भागवत धर्मों की शिक्षा लेवै कपट रहित अनुवृत्ति से सेवा करै जिन धर्मों से आत्मा को देने वाले श्रीहरि प्रसन्न होवैं ॥४७॥ मनुष्य देह सबसे पहले है अति दुर्लभ होने पर भी सुलभ नौका समान प्राप्त हुआ है श्रीगुरु महाराज जिसमें कर्णधार हैं मेरी

अनुकूलता सन्मुख का पवन है इसको पाकर जो संसार समुद्र नहीं तरता है वह आत्मघाती है ॥४८॥

—***—

श्रीगुरु गीतायाम् ।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु र्गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुरेव परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवेनमः ॥४६॥
अखंड मण्डलाकारं व्याप्तं ये न चराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं ये न तस्मै श्रीगुरवेनमः ॥५०॥

श्रीगुरु गीता में कहा है कि गुरु ब्रह्मा हैं गुरु विष्णु हैं गुरु महेश्वर देव हैं गुरू ही परब्रह्म हैं तिन श्रीगुरु महाराज को नमस्कार है ॥४९॥ अखण्ड मंडलाकार चराचर में व्याप्त ऐसे तत्पद को जिन्होंने दिखलाया तिन श्रीगुरुजी को नमस्कार है ॥५०॥

—***—

पंचमे ऋषभदेव वाक्यम् ।

गुरुर्नसस्यात्स्वजनो न सः स्यात्पिता न सस्याज्जननी न सास्यात् दैवं न तत्स्यान्नपतिश्च सस्यान्नमोचयेद्यः समुपेतमृत्युम् ॥५१॥

पंचम स्कन्ध में ऋषभदेवजी का बचन है कि वह गुरु नहीं है। वह स्वजन नहीं है वह पिता नहीं है वह माता नहीं है वह दैव नहीं है वह स्वामी नहीं है जो मृत्यु के समीप में प्राप्त हुए जीवको उससे न बचावे ॥५१॥

—***—

महोदधौ ।

तदेव लग्नं सुदिनं तदेव तारा बलं चन्द्र बलं तदेव। विद्या बलं देव बलं तदेव सीतापतेर्नाम यदा-

स्मरामि ॥५२॥

महोदधि नामक ग्रन्थमें लिखा है कि वही लग्न है वही सुन्दर दिन है वही तारावल वही चन्द्रबल है वही विद्याबल वही दैवबल है जिस समय श्रीसीतापतिजी के नामको स्मरण करूँ ॥५२॥

—***—

इति गुरु लक्षणं गुरु शरणागति वर्णनम् ।

श्रीहनुमन्नाटके ।

रामत्वत्तरुणप्रताप तपनत्रासादिव त्र्यम्बको ।
नोगंगां विजहातिनिस्सरति न क्षीराम्वुधेर्माधवः॥
ताम्यत्ताभ रसान्तराल वसतिर्देवः स्वयम्भूरभूत् ।
पातालावधिपंक मग्न वपुषास्तिष्ठन्ति कूर्मादयः ॥५३
महाराज श्रीमन् जगति यशसा ते धवलिते ।
पयः पारावारं परम पुरुषोयं मृगयते ।
कपर्दी कैलाशं कुलिश भृद्भौमं करिवरं ।
कलानाथं राहुः कमलभवनोहंस मधुना ॥५४॥

श्रीहनुमन्नाटक में कहा है कि हे श्रीरामजी आपके तरुण प्रताप रूपी सूर्य के त्रास से मानो श्रीशिवजी गंगा को नहीं परित्याग करते हैं विष्णु भगवान क्षीर समुद्र को नहीं छोड़ते ब्रह्माजी भी सन्तप्त हुए कमल में भवन बनाकर बसे हैं कूर्मादिक पाताल पर्य्यन्त कीचमें अपने शरीर को छिपा कर बस रहे हैं ॥५३॥ हे श्रीमन् महाराजाधिराज आपके यशसे जगत उज्वल हो जाने के कारण परम पुरुष विष्णु भगवान क्षीर समुद्र को खोजते फिरते हैं श्रीशिवजी कैलाश को खोजते हैं इन्द्र अपने ऐरावत हाथी को खोजता है राहु चन्द्रमा को खोजता है कमल भवन ब्रह्माजी हंसको खोजते हैं तात्पर्य्य यह है कि आपके यश

से सब जगत स्वेत हो गया है इसी कारण क्षीर समुद्रादि पृथक् प्रतीति नहीं होते हैं ॥५४॥

शत चक्र समो विष्णोः हर शूल शतैः समः ।
शत वज्र समश्चासौ रामवाणः प्रतापवान् ॥५५
तूणे नैक शरं करेण दशधा सन्धानकालेशतम् ।
चापेभूत सहस्र लक्षगमने कोटिश्च कोटिर्वधे ।
अन्तेअर्व निखर्ववाण विविधैः सीतापतिश्शोभितः ।
एतद्बाण पराक्रमस्य महिमा सत्पात्र दानेयथा ॥५६

अब श्रीराम बाण महिमा का वर्णन करते हैं श्रीराम बाण विष्णु भगवान के शत चक्र समान प्रतापवान है तथा श्रीशिवजी के सौ शूल के समान प्रतापवान है इन्द्रके सौ वज्रके समान प्रतापवान है यहां पर शत शब्द संख्या परक नहीं है किन्तु असंख्य परक है "शतं सहस्र मयुतं सर्व मानन्त्य वाचकम्" ॥५५॥ श्रीराम बाण तूणमें रहने पर एक है और हाथमें लेने पर दशगुण हो जाता है सन्धान करते करते सौ, धनुष में आते हजार, चलते समय लक्ष बधके समय कोटि कोटि हो जाते हैं अन्तमें अर्व खर्व पर्यन्त बढ़ जाते हैं इस प्रकार के विविध बाणों से श्रीसीतापति श्रीरामजी शोभित होते हैं यह बाणके पराक्रम की महिमा है इसी तरह अच्छे सत्पात्र में दानकी भी यही महिमा है कि एक का अन्तमें अर्व खर्व पर्यन्त होता है ॥५६॥

नागानामयुतं तुरंग नियुतं सार्द्धं रथीनांशतम् ।
पत्तीनां दश कोटि संनिपतिने नृत्यत्कंबंधोरणे ॥
एवं कोटि कवंध नर्तन विधौ नृत्ये तथाखेचरः
स्तेषां कोटिक नर्तनेरघुपतेः कोदण्डघण्टारवः ॥५७

दश हजार हाथी एक लक्ष घोड़ा डेढ़ लक्ष रथी दश करोड़ पैदल जब मारे जाते हैं, तब एक कवन्ध उठता है इसी तरह कोटि कबन्ध उठने पर एक खेचर का नृत्य होता है तैसे ही कोटि खेचर नृत्य होते

पर श्रीरघुनाथजी धनुष के घंटा का टंकोर होता है ॥५७॥

—***—

वाल्मीकीये ।

न कालस्य न शक्रस्य न विष्णोर्वित्तपस्य च ।
कर्माणि तानिश्रूयन्ते यानि युद्धे हनूमतः ॥५८

वाल्मीकीये उत्तर काण्डे ।

उपनृत्यन्ति काकुत्स्थं नृत्यगीत विशारदाः ।
दक्षिण्योरूपवत्यश्च स्त्रियः सर्व गुणान्विताः ॥५९
तथातयोर्विहरतोः सीताराघवयोश्चिरम् ।
दश वर्षसहस्राणि गतानि सु महात्मनोः ॥६०

श्रीमद्वाल्मीकि में लिखा है कि काल और इन्द्र विष्णु भगवान तथा कुवेर के वैसे कर्म नहीं सुनने में आये हैं जैसे कर्म युद्धमें श्रीहनुमानजी के हमने देखे हैं यह श्रीरामजी ने श्रीअगस्त्यजी से कहा है ॥५८ श्रीमद्वाल्मीकीय उत्तर कांडमें यह भी कहा है कि नृत्य गीतमें प्रवीण परम उत्तम रूपवती दक्षिण नायिका सर्व गुण युक्त ॥५९॥ स्त्री सब श्रीरामजी के पासमें अशोक वाटिका में नृत्य करती हैं इसी तरह विहार करते हुए माहात्मा श्रीसीतारामजीके दश हजार वर्ष बीते ॥६०

—***—

श्रीमन्महारामायणे शंकर वाक्यम् ।

मुनिवेष धरं रामं नील जीमूत सन्निभम् ।
रमन्तेयोषित्ती भूता रूपं दृष्ट्वा महर्षयः ॥६१॥
ईषद्धास्य कृतो रामो दृष्ट्वा तेषामिमां गतिम् ।
यूयं धर्मतरा ज्ञानं मत्प्रसन्नेहि साम्प्रतम् ॥६२॥

रमितारामभूर्तौते स्त्रियोरूपास्तपश्चरन् ।
अतो देवि रमुक्रीड़ा रामनाम्नैव वर्तते ॥६३॥

श्रीमन्महारामायण में श्रीशिवजी का बचन है कि नील मेघ के समान मुनि वेषधारी श्रीरामजी को तथा उनके अद्भुत रूपको देख कर दण्डकारण्य बासि महर्षिगण योषित होकर इनके साथ रमण करें इस प्रकार दृढ़ इच्छा वाले हुए ॥६१॥ श्रीरामजी ने उन सबों की यह गति देखकर मन्द मुसुका कर यह कहा कि आप धन्यतर हैं हमारे प्रसन्नता से आप सबों को इस समय में यह ज्ञान उत्पन्न हुआ ॥६२॥ वे महर्षि तप करते हुए श्रीराम मूर्ति में स्त्री होकर रमण करने की इच्छा वाले हुए इस हेतु से रमुक्रीड़ा इस धातु की अन्वर्थता श्रीराम-नामही से पूर्ण होती है ॥६३॥

--***--

श्लोकौयाभ्यां निजेष्टंध्यायेत् ।

रामंसान्द्र घन स्वरूपममलं सच्चिद्घनानन्दकं ।
विद्युद्दिव्य दुकूल पीत युगलं श्रीदाम वक्षस्थलं ॥
मंजीरांगद रत्न कंकण रणत्कांचीलसन्मुद्रिकं ।
मुक्ताहार किरीट कुंडलधनुः संचित्रवाणोज्वलम् ॥६४
काश्मीरी तिलकालकावृतमुखं साचीक्षणंसस्मितं ।
ताम्बूलाधर पल्लवं रसमयं नासाग्र मुक्ताफलं ॥
ध्यायेच्छत्र सुदिव्य चामर युतं साकेत रत्नासने ।
जानकयशंभुजंसखीगणवृतंनित्यंनिकुंजेस्थितम् ॥६५

अब अन्तमें दो श्लोक वे हैं जिनसे अपने इष्ट श्रीसीतारामजी का श्रीरामोपासक ध्यान करें। सजल जलद समान अमल रूप वाले सच्चिदानन्द घन श्रीरामजी को बिजुली के समान पीत वस्त्र धारण किये दिव्य मणि मालाओं से वक्षस्थल शोभित, मंजीर, अंगद, रत्नकंकण

तथा शब्द करती हुई क्षुद्र घंटिका एवं मुद्रिकादि भूषण शोभित हैं जिनमें मोतियों के हार किरीट कुण्डल धनुष तथा सम्यक प्रकार के चित्र विचित्र वाणों से उज्वल ॥६४॥ कस्तूरी का तिलक अलकावली से आवृत मुख प्रेम कटाक्ष से भरी चितवनि मन्द मन्द मुसुकराते तांबूल से रंजित अधर पल्लव नाशाग्र में मुक्ताफल शोभित है जिनके दिव्य सखी गणों से परिवृत श्रीजनकात्मजाजू के अंशमें भुज दिये साकेत रत्न सिंहासन पर नित्यही निकुञ्जमें स्थित श्रीरामजी को दिव्य छत्र चाँवरादि राज विभूति से युक्त नित्यही ध्यान करै ॥६५॥

इति श्रीराम-नवरत्न सार संग्रहे रत्न प्रभाख्या टीका सर्व शास्त्रविद संत शिरोमणि श्री १०८ स्वामी पं० श्रीरामबल्लभाशरणजी महाराज कृता समाप्ता ।

—***—

जो मन राम सुधा रस पावै ॥ टेक ॥

तौकत सकल विषय मृग जल लखि तृषित वृथा उठि धावै। अभय करौं सब विधि श्रीमुख कहि सकृत शरण कोउ आवै॥ तौकत विषय विवस सुर नर मुनि तिन कहँ वादि मनावै। श्रीरघुबीर भक्ति चिन्तामणि संसृत बेगि मिटावै ॥ तेहि तजि ज्ञान जोग तप साधै श्रम फल सब श्रुति गावै। अमित मदन छवि रामरूप रुचि हृदय नैन लखि आवै॥ तौकत त्रिभुवन रूप जहां लौं लखि शठ जन्म नसावै । जो श्रीराम कृपा प्रताप गुन श्रीगुरु शरण लखावै॥

तौकत डरै लोक जम कालहि सकल राम दरसावै ।
यह सियवर नवरत्न मनोहर द्वादश रसहि जनावै ॥
श्रीरामचरण नित सुनत पढ़त जो सो रघुबर मन भावै ॥६६॥

इति श्रीराम नवरत्न सार संग्रहे श्रीराम रूप गुण प्रताप शरणागत भेद वर्णनं नाम नवमं ६ रत्नम् ।

रामायणेकृता टीका येन श्रीतुलसी कृते ।
श्रीराम चरणाख्यं तंवंदेऽहं परमं गुरुं ॥१॥
मुमुक्षूणां कोटयश्च ह्यंकिता राममुद्रया ।
येनश्रीरामचरणं तंवंदे परम गुरुं ॥२॥
न्यायवेदान्त कुशलंकविं बुद्धिमताम्बरं ।
श्रीरामचरणाख्यं तंवंदेहंपरमं गुरुं ॥३॥
ज्ञान वैराग्य भक्तीनां भवनं रसिकंपरं ।
श्रीरामचरणाख्यं तंवंदेहं परमंगुरुं ॥४॥
श्रीरामचरणाभ्यांचावतारो यस्यजायते ।
नाम्नापि रामचरणस्तं वंदे परमं गुरुं ॥५॥

———

लेखक,
श्रीपुरुषोत्तमशरण,
श्रीसरयू तट, सद्गुरु सदन पापमोचन घाट,
श्रीसिया मोहनोकुञ्ज श्रीअयोध्याजी ।
मि० ज्येष्ठ कृ० ४ मंगलवार ४ बजे सं० १९८५ ।

शुद्धाशुद्ध पत्र ।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
सर्वत्र		ब	घ
१	१०	कंश	कंस
३	२१	संघान	संधान्
५	१८	देने वालो	देखने वाले
६	१६	रसिको	रसिका
८	१५	परिनाम	परनाम
११	६	ज्ञान	ज्ञान
१२	२३	स्वाराणां	स्वराणां
"	२२	मुनर्द्धि	मुर्द्धि
"	२४	देहि	देही
"	२४	नोर्द्ध व	नोर्ध्व
१७	२५	रघुत्तमः	रघूत्तमः
१८	१	हनुत्सं	हनुमत्सं
२४	१६	यिस्यात्	यत्स्यात्
२९	८	तदूर्द्धौ	तदूर्ध्वौ
३१	६	प्रकृतेपरः	प्रकृतेः परः
"	१२	दिय्यं	दिव्यं
३२	१०	श्रावण	स्रावण
"	१५	माहत्ता	महता
३३	२	काटि	कोटि
४०	२१	विविधि	विविध
४२	२२	वेदोम्रृतेना	वेदाम्रृतेना
४५	२२	धंनुष	धनुष
४६	२३	नामांकितैः	नामांकितैः

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४७	६	मवेन्नरः	भवेन्नरः
४८	४	प्रमाण	प्रणाम
५१	३	उद्धर्व	ऊर्ध्व
,,	७	पुंड़णां	पुंड्राणां
,,	१३	ऊद्धर्व	ऊर्ध्व
५२	१८	ऊद्धर्व	ऊर्ध्व
५४	१४	वेदोपि	वेदेपि
५५	४	द्वैतमत	द्वैतमतं
५८	१९	शिष्णता	शिष्यत
५९	२४	डरसे	दूरसे
६०	२०	प्रक्कर्वीत्	प्रकुर्वीत्
६५	१०	कहै है	कहा है
६७	४	भगवत्द्रूप	भगधद्रूप
६९	२२	यत्तए	यतए
७२	९	क्त्रीं	कत्रीं
७३	१९	गुरुत्तल्या	गुरुतल्पा
७५	६	विद्धा	विद्धी
७५	१६	अक्ष्मण	लक्ष्मण
७६	२	वदूयामि	वदामि
७६	४	विभोगे	विभागे
७६	१९	विपर्ज्यः	विपर्य्ययः
७८	१६	सद्वी	सद्वी
७८	१७	सद्वीत्पि	सद्वीत्ति
७९	१	रकरोमूर्द्धि	रकारोमूर्द्धि
७९	२	मकाराधर्य्यो	मकारोधरयो
८०	५	आहितानि	आहिताग्नि

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८२	३	अच्छादि	आच्छादि
८२	२३	अथोध्य	अयोध्या
८४	१४	लालीस्पदं	लीलास्पदं
८४	१८	माहात्म्व	माहात्म्य
८४	२२	नदिषोम	नदियों में
८५	८	वर्णन	वर्णनं
८६	१७	निःकिञ्चन	निष्किचन
८६	१९	मिथ्यारोत्पित	मिथ्यारोपित
८७	१८	दैन्य मयं	दैन्य भयं
९१	४	मुवितले	भुवितले
९२	२	सरितांपति	सरितांपतिं
९२	५	किपरं	किमपरं
९२	१४	शुचिरकि च	शुचिरकिंच
९३	५	ज्ञात्वाचय	ज्ञात्वाचये
९७	१	चिद्धनं	चिद्घनं
९८	८	वर्णनं रत्नमम्	वर्णनं रत्नम्
९९	१७	मानोन्नति	मानोन्नतिं
९९	२१	तुलायाम	तुलयाम
१००	१०	संगाय ही	संगाप ही
"	१६	छोडने	छोडाने
१०१	६	वाणिक	वणिक्
१०४	९	जिनको शत्रु	जिनके शत्रु
१०५	१४	दासौ। गृहण	दासों ग्रहण
१०६	१	नचेज्या	नचेज्यया
"	२२	योभुंक्तो	योभुंक्ते
११२	१४	तमोलयाशतु	तमोलयास्तु

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
,,	२२	स्मृतिः	स्मृति
११३	५	राज	राजस्
,,	१६	विषयोत्थतुं	विषयोत्थंतु
,,	२७	सोर्जुंज	सोर्जुन
११४	९	सम हैं	सम है
,,	१३	सक्यमानो	शक्यमानो
,,	१४	असक्तस्य	अशक्तस्य
,,	१४	न दोषा चिन्तयेद्यदि	नदोषोचिन्तयेद्यदि
,,	२४	धिपा	धिया
११६	२४	परस	स्पर्श
११९	१४	दिशाआ	दिशाओं
,,	२२	प्राप्त	प्राप्त है
१२०	४	व्रजः	व्रज
१२५	२५	श्रेयः सुर्ति	श्रेयः सृति
१२७	२१	छड़ोकर	छोड़कर
,,	१८	सुभगे	शुभगे
१२८	३	वहुभिप्रकारैः	वहुभिः प्रकारैः
,,	४	विगत	विगत
,,	१७	त्युशकक्ष	त्युशक्क्ष
१३१	९	ताम्यत्ताम	ताम्यत्ताम
१३४	२०	जानक्यशं	जानक्यंश

श्रीसीताराम चरण चिन्ह ।

श्रीराम चरण चिन्ह चिंतु सब विधि सुख छाजै ॥
रघुबर के चरण कमल अंकन जुत निरखु अमल ।
धारे पद चिन्ह राम संतन हित काजै ॥
श्रीराम चरण दाहिन सोइ सीता पद वाम चिन्ह ।
विंश चारि स्वस्ति काष्ट कोण श्री विराजै ॥१॥
हल मूसल सर्प वाण अंवराष्ट पद्म जान ।
वज्रं जब अर्द्ध रेख कल्प वृक्ष छाजै ॥
अंकुश ध्वज मुकुट चक्र सिंहासन दंड चमर ।
छत्र पुरुष माला जव दक्षिण पद भ्राजै ॥२॥
गो पद छिति घट पताक जम्बू फल अर्द्ध इन्दु ।
शंख षष्ट कोण त्रय गदाजि व विन्दु राजै ॥
सरजु शक्ति सुधा कुंड त्रिवली मीन पूर्ण चन्द्र ।
वीन बेनु धनुष तूण हंस चन्द्रि काजै ॥३॥
सीय राम चरणौ शुभ चिन्ह अष्ट चालिस नित ।
चिंतत शिव नारद सनकादिक अहि राजै ॥
श्रीराम चरण ध्यान धरत गोपद इव जगत तरत ।
विरत ज्ञान भगति भरत सजत सत समाजै ॥४॥

———

श्रीसरयू अष्टक ।

जय जय श्रीअवध दिव्य जय जय श्रीसरजू ॥ टेक ॥
अद्भुत चिद्रूप धाम निरमल जिमि राम नाम ।
प्रकृति पार परम दिव्य ब्रह्म भक्ति घर जू ॥
धार कुन्द इन्दु रंग मुक्तावलि वर तरंग ।
शोभित उर पुरी नारि दिव्य हार लरजू ॥ १ ॥
चारि चारु द्वार चारि मुक्ति मनहु कर पसारि ।
लेत गोद भीतर भव बाहिर नहिं डरजू ॥
दामिनि निन्दरति नीर शीतल यक रस गँभीर ।
दरस परस मज्जन पिये दुरित दोष हरजू ॥ २ ॥
घर घर प्रति कल्प वृक्ष धवल धाम गुच्छ स्वच्छ ।
रिद्धि सिद्धि बाहिर पुर झारति रज खरजू ॥
अचल सरजु तिहूँ काल क्रीड़ा रस लली लाल ।
रघुबर मन भव प्रवाह सुधा सलिल भरजू ॥ ३ ॥
निर्मित गज मुक्त अवनि पूरित पुर पुरट चवनि ।
विचरत सर हंस गवनि मंगल घर घर जू ॥
युगल कूल विरति ज्ञान शान्ति तोष मनि सोपान ।
भक्ति धार मुनि विहार दोउ किनार पर जू ॥ ४ ॥
ध्यावत मुनि जन अनन्त गावत बुध श्रुति भवन्त ।
पावत भगवन्त अवध भावत मन भरजू ॥
वेद विबुध वन्दनि मुनि चित चकोर चन्दनि ध्वनि ।
त्रिविधि ताप भंगनि हिम कमल करम जरजू ॥ ५ ॥
काल जाल गंजनि शुभ अशुभ कर्म खंडनि मुनि ।
चित अनन्द कन्दनि जिन्ह अवध चरन धरजू ॥
जिय चेत अवध चलजू नहिं ज्ञान कर्म करजू ।
बसि राम चरण सरजु तीर राम राम ररजू ॥ ६ ॥